चन्दामामा
माँ - बच्चों का मासिक पत्र

Photo by P. R. Shinde

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

'मिलकर चलना सीखो लाल!'

प्रेषक :
श्री राजेन्द्र कुमार

फ़रवरी १९५७

विषय - सूची

एक प्रति रु. ०–८–० वार्षिक चन्दा रु. ६–०–०

हम प्रत्येक व्यक्ति और व्यापारिक संस्थाओं को आश्वासन देना चाहते हैं कि कलात्मक सृजन, स्वच्छतम कार्य-निपुणता, आकर्षणीय छपाई और शीघ्र वितरण हमारा ध्येय है।
*
हिन्दी, अंग्रेजी, तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मराठी, गुजराती, मलयालम और उड़िया में छपाई का कार्य लिया जाता है।
*
दी बी. एन. के. प्रेस
(प्राइवेट) लिमिटेड
चन्दामामा बिल्डिंग्स :: मद्रास-२६
टेलीफ़ोन : ८८५७४

सूचना

★

एजेन्टों और ग्राहकों से निवेदन है कि मनीआर्डर कूपनों पर पैसे भेजने का उद्देश्य तथा आवश्यक अंकों की संख्या और भाषा संबंधी आदेश अवश्य दें। पता—डाकखाना, जिला, आदि साफ साफ लिखें। ऐसा करने से आप की प्रतियाँ मार्ग में खोने से बचेंगी।

सर्क्युलेशन मैनेजर

आओ बहन भरलो पानी!

पानी पर हमारा जीवन निर्भर है, पानी ही हमारे शरीर को स्वच्छ करता है, हमारी प्यास बुझाता है। भगवान की यह देन हम सभी के लिए है।

आइये, बंधुत्व की श्रेष्ठ भावना से हम हृदय ओतप्रोत करलें। हम अपने भाई-बहिनों की तरह हरिजनों को भी प्यार से गले लगाएं।

> हिंदू शास्त्रों में अस्पृश्यता नाम की कोई चीज ही नहीं है:—
>
> महात्मा गांधी।

**"छूतछात को छोड़ो,
दिल को दिल से जोड़ो"**

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

प्रारम्भ से ही, "चन्दामामा" की धारावाहिक कहानियाँ लोकप्रिय रही हैं। पाठकों ने अपने पत्रों में उनकी पर्याप्त प्रशंसा भी की है।

प्रति मासिक पत्र में, चाहे वह किसी श्रेणी की हो, धारावाहिक सामग्री का अपना महत्व है। अब तो इसकी परम्परा भी चल पड़ी है।

"चन्दामामा" की एक धारावाहिक कहानी "विचित्र जुड़वाँ" पुस्तकाकार में भी प्रकाशित हो चुकी है। अन्य धारावाहिक कथाओं को भी पुस्तकाकार में प्रकाशित करने का कार्यक्रम है।

"भयंकर देश" जो पिछले महीनों प्रकाशित होता रहा, अब समाप्त हो गया है। परन्तु इस अंक के साथ एक और धारावाहिक कहानी दी जा रही है—"तीन मान्त्रिक"

इस तरह "चन्दामामा" में फ़िलहाल "नाविक सिन्दबाद", "भुवन-सुन्दरी" और "तीन मान्त्रिक" कहानियाँ शृंखलाबद्ध रूप से चल रही हैं। आशा है, पाठक इन्हें पसन्द करेंगे।

अंक : ६

फ़रवरी १९५७

वर्ष : ८

मुख - चित्र

पिता की इच्छानुसार सावित्री अपने पति की खोज करने निकली। पुण्य क्षेत्रों का भ्रमण करती हुई वनों में तपस्या करनेवाले राजर्षियों के दर्शन भी करती गई। उसे एक दिन सत्यवान नामक युवक दिखाई दिया।

सत्यवान का पिता द्युमत्सेन कभी साल्व देश का राजा था। जब उनकी दोनों आँखें अँधी हो गयीं तो शत्रु राजाओंने उनके राज्य पर कब्जा कर लिया और उन्हें जंगल में भेज दिया।

सत्यवान को देखते ही सावित्री को लगा कि वही उसके पति होने योग्य है। तब वह अपनी यात्रा स्थगितकर मद्रदेश वापिस आ गयी। ठीक उसी समय नारद भी अश्वपति से मिलने आये थे। "तुम्हारे लायक पति तुम्हें कहीं दिखाई दिया?" अश्वपति ने अपनी बेटी सावित्री से पूछा। सावित्री ने उत्तर दिया कि उसने सत्यवान के साथ विवाह करने का निश्चय कर लिया है।

"मुनीश्वर! क्या आप यह बता सकते हैं कि सत्यवान मेरी बेटी के लायक पति हैं अथवा नहीं?"—अश्वपति ने नारदमुनि से पूछा।

नारद ने पहले तो कुछ संकोच किया; फिर कहा—"आज के राज कुमारों में सत्यवान की तुलना में कोई नहीं है। पर उसमें एक कमी है। आज से ठीक एक साल बाद उसकी जीवन-लीला समाप्त हो जाएगी।" यह सुन अश्वपति को बड़ा दुःख हुआ। "बेटी! किसी और को अपना पति चुन लो। इस अल्प-आयुवाले व्यक्ति को क्यों चाहती हो?" अश्वपति ने कहा।

सावित्री ने कहा—"मन और वचन से स्त्री एक ही का वरण कर सकती है। एक दिन के लिए ही सही मैं सत्यवान की पत्नी बनकर रहना चाहती हूँ।"

यह सुनकर नारद ने अश्वपति को सलाह दी कि वह उसकी इच्छा नुसार ही उसका विवाह करें। अश्वपति सावित्री के विवाह का मुहूर्त निश्चितकर द्युमत्सेन के आश्रम में गया। वहीं पर सावित्री-सत्यवान का विवाह वेदोक्त रीति से सम्पन्न हुआ।

चिरई का ब्याह

श्री देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त', लश्कर.

एक चिरई ने ब्याह रचा है
पक्षी सभी बुलाए हैं।
लिखने उसकी लगन पत्रिका
सुग्गा पंडित आए हैं।

हंस बराती बनकर आये
टीका करतीं पुड़इयाँ।
छुटक-मुटककर मोर नाचते
गाना गातीं गलगलियाँ।

बैठ बराती भोजन करते
मन ही मन खुश होते हैं।
पाँच परेवा परस-परसकर
पुड़ी-पकौड़ी देते हैं।

भोजन करके सभी बराती
मजलिस एक भगाते हैं।
ढमा-ढमा-ढम ढोल बजाकर
कौआ गायक गाते हैं।

लावर-झारर गीत मजे के
सारस-सुग्गे सुनते हैं।
और खुशी से झूम-झूमकर
अपना दाना चुनते हैं।

मधुमक्खी

श्रीमती विद्यादेवी शर्मा, आगरा.

मधुमक्खी ने भारी श्रम से
एकत्रित जो शहद किया।
"भगवन चखें"—देवता पर यह
कहकर उसने चढ़ा दिया॥

चखकर हुए प्रसन्न देवता
बोले—"तुम कुछ वर माँगो।"
मधुमक्खी ने कहा—"काट लूँ
जिसे उसे ही पीड़ा हो॥

"देख छटपटाते पीड़ित को
गाऊँ मैं भन-भन भनकर।
ऐसा वर दें मुझको स्वामी
अगर प्रसन्न आप मुझ पर॥"

चकराए सुन बहुत देवता
बोले—"वचन दे चुका जब।
ऐसा ही होगा लेकिन है
एक शर्त मेरी भी अब॥

"जिसको काटो उसके तन में
डंक तुम्हारा टूटेगा।
बहुत छटपटाएगा वह पर
प्राण तुम्हारा छूटेगा॥"

बचो जो दुख पहुँचाते हैं।
वह भी कभी न सुख पाते हैं॥

ब्रह्मदत्त जब काशी का राजा था, तब बोधिसत्व एक ब्राह्मण के लड़के के रूप में पैदा हुए। वे बौने थे, इसलिए उन्हें लोग 'बदशकल' कहकर पुकारते थे। पर उन्हें इसकी कुछ भी परवाह न थी। छुटपन में ही तक्षशिला जाकर उन्होंने धनुर्विद्या सीखकर काफ़ी ख्याति पाई थी।

उस बदशकल को धनुर्विद्या द्वारा रोज़ी बनाने की सूझी। वह घूमते-घामते कितने ही देश गया, कितने ही राजाओं से मिला। उसने उनसे कहा कि वह धनुर्विद्या-प्रवीण था। उनसे नौकरी माँगी। पर चूँकि वह बौना था, इसलिए किसी ने भी उसको नौकरी न दी। वह मन मसोसकर रह गया।

नौकरी पाने के लिए क्या करना होगा? उसे पता न लगा! वह यह भी न जान सका कि उसको अपनी विद्या का किस प्रकार उपयोग करना होगा? एक दिन एक गाँव में वह जुलाहों की गली में से जा रहा था। उसे एक हट्टकट्टा आदमी करघे पर काम करता दिखाई दिया। बदशकल ने उसके पास जाकर पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है?"

"मेरा नाम भीमसेन है।" जुलाहे ने कहा।

"इतने लम्बे-चौड़े हो! इतना बड़ा-चढ़ा नाम है और करते जुलाहे का काम हो? क्या बात है? मेरी समझ में तो कुछ नहीं आ रहा है; बोलो भाई!" बदशकल ने उससे पूछा।

"मैं क्या करूँ? सिवाय कपड़े बुनने के मुझे और कोई काम नहीं आता?" भीमसेन ने कहा।

"अगर ऐसी बात है तो मैं तुम्हें एक ऐसा तरीका बताऊँगा, जिससे तुम

खूब कमा सकोगे, मेरे साथ आओगे?" बदशकल ने पूछा।

भीमसेन खुशी खुशी बदशकल के साथ गया। दोनों मिलकर एक दिन में काशी पहुँचे।

"तुम राजा के पास जाकर यह कह देना कि तुम धनुर्विद्या में प्रवीण हो। उनसे नौकरी माँगो। तुम्हारी लम्बाई-चौड़ाई देखकर वे बहुत प्रभावित होंगे और ज़रूर तुम्हें नौकरी देंगे।" बदशकल ने भीमसेन से कहा।

"पर मुझे तो धनुर्विद्या नहीं आती है!" भीमसेन ने कहा।

"अगर नहीं आती है तो कोई बात नहीं है। मैं खूब जानता हूँ। तुम मुझे अपने साथ रखो और जब कभी ज़रूरत होगी, मैं तुम्हारी मदद करता रहूँगा; तुम निश्चिन्त रहो।" बदशकल ने उसे उत्साह दिलाते हुए कहा।

भीमसेन ने राजा के पास जाकर कहा कि वह धनुर्विद्या में बड़ा प्रवीण था। राजा को बड़ी प्रसन्नता हुई और वहाँ उसको आसानी से नौकरी मिल गई। उसका वेतन एक हज़ार रुपया था। बदशकल उसका योद्धा हो गया। दोनों एक जगह रहकर आराम से दिन गुज़ारने लगे।

इस बीच, काशी की प्रजा पर एक विपत्ति आ पड़ी। काशी राज्य के पासवाले अरण्य में, एक शेर, आते-जाते राहगीरों को मारने लगा। यह पता लगते ही राजा ने भीमसेन को बुलवाया और उसे आज्ञा दी कि वह जाकर शेर को मारे और राहगीरों की प्राण-रक्षा करे।

भीमसेन राजा से विदा लेकर, बदशकल के पास आया। उसने पूछा—"अब मुझ पर आफ़त आ पड़ी है। मैं उस शेर को

कैसे मार सकता हूँ! इस आफ़त से कैसे बचूँ!"

"जो मैं कहूँ करो। तुम शेर को अकेला नहीं मार सकते। शहर से बाहर जाते ही दो हज़ार गाँववालों को इकट्ठा करो। शेर की जगह जाओ। शेर का गर्जन सुनते ही तुम कहीं किसी पेड़ के पीछे छुप जाओ। तुम्हारे साथ आये हुए लोग, शेर को मार देंगे। शेर के मरने तक छुपे रहो, फिर एक बेल को तोड़कर सामने आ जाओ। शेर को मरा देखकर यों गुस्सा दिखाओ—"इस बेल से इसको पकड़कर मैं राजा के सामने अपना चातुर्य दिखाना चाहता था। उसे मारना ही था तो तुम सब की क्या ज़रूरत थी! क्या मैं काफ़ी नहीं हूँ! कहो किसने इस शेर को मारा है! मैं उसका गला कटवा दूँगा" इस तरह चिल्लाओ। लोग डर जायेंगे और कोई नहीं बतायेगा कि शेर किसने मारा है। तब तुम राजा के पास जाकर कहना कि शेर तुमने ही मारा है। तुम्हारी बात का विरोध करने का किसी में साहस न होगा।"—बदशकल ने उसे समझा-बुझाकर सलाह दी।

भीमसेन ने ठीक वही किया जो बदशकल ने बताया था। जब गाँववाले शेर मार रहे थे, तो भीमसेन कहीं पेड़ों के पीछे खिसक गया। उसके मरने के बाद, एक बेल हाथ में लेकर बाहर आया और गाँव वालों को डाँटने-डपटने लगा। उसने कहा—"जिस किसी ने शेर को मारा है, उसका सिर धड़ से उड़ा दिया जायेगा।" गाँववाले डर गये और अपने अपने रास्ते चले गये। यह मौक़ा देखकर भीमसेन वापिस शहर गया, और राजा से उसने बड़ा रौब दिखाते हुए कहा—"महाराज! मैंने शेर को मार दिया है। अब प्रजा को किसी प्रकार का भय नहीं है। वे बेफ़िक्र होकर इधर से आ-जा सकते हैं।"

राजा, भीमसेन का पराक्रम देखकर बड़ा सन्तुष्ट हुआ। भीमसेन की ख्याति दुगनी हो गई। सब कोई उसी की तारीफ़ करता। प्रशंसा पाकर, भीमसेन सोचने लगा कि सचमुच वह बहुत बड़ा पराक्रमशाली है और बदशकल को वह नीची नज़र से देखने लगा। बदशकल भी यह देख सब बातें समझ गया। पर उसने उसकी ख़ास परवाह न की। सब सहता रहा।

कुछ दिनों बाद शत्रु राजा ने आकर काशी राज्य को घेर लिया। उसने राजा के पास ख़बर भिजवाई—"हार मानते हो या तुम पर हमला करूँ?" राजा ने भीमसेन को बुलाकर आज्ञा दी—"जल्दी सैनिकों को लेकर जाओ और शत्रुओं को परास्त करो।" उसे कवच पहिना कर, धनुष-बाण देकर, हाथी पर चढ़ाकर युद्ध स्थल को भेजा।

बदशकल यह बात अच्छी तरह जानता था कि भीमसेन ख़तरे में पड़नेवाला है। वह भी धनुष-बाण लेकर भीमसेन के पीछे हाथी पर जा बैठा। चारों ओर घुड़सवार और पदाती चल रहे थे। वे शीघ्र ही युद्ध-भूमि में पहुँच गये।

शत्रु सेना को सामने तैयार खड़ा देख भीमसेन पसीना-पसीना हो गया। हाथ-पैर ठंडे पड़ गये। दिल की धड़कन तेज़ हो गई। उसने हाथी पर से खिसककर मरना चाहा। अगर ठीक वक्त पर बदशकल उसको हाथी पर न बांध देता, तो नीचे गिरने पर वह घोड़ों द्वारा कुचल दिया जाता।

तब बदशकल ने नेतृत्व स्वयं अपने हाथ में लिया। वह हाथी पर तूफ़ान की तरह शत्रुओं के बीच गया। उन पर बाण वर्षा करता, शत्रु राजा के पास पहुँचा। थोड़ी देर में शत्रु राजा घायल हो गया। हार गया और वह बदशकल का क़ैदी भी हो गया।

बदशकल के युद्ध-भूमि से वापिस जाने के बाद राजा को मालूम हुआ कि सचमुच कौन धनुर्विद्या में प्रवीण था। उसने बदशकल को अपनी सेना का सेनापति नियुक्त किया। बदशकल ने भीमसेन को अनेक भेंट-उपहार देकर विदा किया।

अवन्ती नगर में एक बूढ़ा व्यापारी रहा करता था। जवानी में ही वह कई देश-विदेश गया और जहाज़ों के व्यापार में उसे काफ़ी फ़ायदा भी हुआ। उम्र बढ़ती गई। उसने अपना व्यापार अपने लड़कों को सौंपने की कोशिश की। परन्तु उसके तीन लड़कों में बड़े दो लड़के जीवदत्त और लक्षदत्त निकम्मे थे। उनमें इतने ऐब आ गये थे कि घर भी मुश्किल से आते थे। तीसरे लड़के पिंगल की अभी बीस वर्ष की भी उम्र न हुई थी।

इसी चिन्ता में बूढ़ा व्यापारी कई दिनों चारपाई पकड़े रहा। आखिर मरते समय उसने अपनी संपत्ति तीनों लड़कों और पत्नी में समान रूप से बाँट दी। पिता के मर जाने के बाद जीवदत्त और लक्षदत्त अपनी संपत्ति बिना आगे-पीछे देखे खर्चने लगे माँ भी दोनों लड़कों की फ़िजूल खर्च देख, अपनी सम्पत्ति को लेकर छोटे लड़के पिंगल के यहाँ रहने चली गई।

जीवदत्त और लक्षदत्त का जब पैसा खतम हो गया तो माँ को ढूँढ़ते ढूँढ़ते वे पिंगल के घर पहुँचे। पिंगल अपने भाइयों को देखकर बहुत खुश हुआ और उसने उन्हें आदरपूर्वक निमन्त्रित किया। पर उन्होंने उसका निमन्त्रण अस्वीकार कर दिया। माँ को उन्होंने अपने घर आकर रहने के लिए बहुत आग्रह किया।

माँ ताड़ गई कि वे क्यों उसे अपने घर बुला रहे थे। क्योंकि दोनों लड़कों को उसके प्रति कोई आदर न था पति के दिये हुए धन को हड़पने के लिए ही वे प्रेम का दिखावा कर रहे थे। इसलिए उसने इधर उधर की बातें करके अपने लड़कों से कहा—"तुम दोनों बड़े हो। अपने पाँवों पर खड़े हो सकते हो। अच्छाई बुराई समझ सकते हो। पिंगल अभी छोटा है। बचपन है। इसलिए मेरा उसके पास रहना ही अच्छा है।"

बड़े लड़के अपनी माँ पर गरज पड़े—"अच्छा, तू उसी के पास रह। हमें कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु पिता जी जो तुझे सम्पत्ति दे गये हैं, उसमें से हमारा हिस्सा हमें दे दो। वरना हम यहाँ से नहीं हटेंगे।"

"मेरे जीते जी, तुम उसमें से कैसे हिस्सा ले सकते हो!" माँ ने पूछा।

"अगर आज हमारा हिस्सा न मिला, तो बाद में मिलेगा, इसका क्या भरोसा है! अगर पिंगल ने वह सम्पति हड़ा ली और तुझे चकमा दिया तो हमारा क्या होगा! अभी फ़ैसला हो जाना चाहिए।"—बड़े लड़कों ने कहा।

भाइयों का इस प्रकार कहना पिंगल को बहुत बुरा लगा। उसने माँ के पास जाकर कहा—"माँ! अगर तू चाहती है तो भाइयों के पास ही जाकर रह। तेरी सम्पत्ति में से मुझे एक दमड़ी भी नहीं चाहिये।"

माँ यह न मानी। दोनों लड़कों को बड़ा गुस्सा आया। उन्होंने माँ को लाठियों से मारना शुरू किया। पिंगल को अपने भाइयों के इस कार्य पर बहुत दुख हुआ। उसने उन्हें रोका। इस पर वे और भी बिगड़े। उसे भी बुरी तरह मारा-पीटा।

माँ जैसे तैसे घर से बाहर जाकर, आस पास के घर के लोगों को बुला लाई। उन्होंने बड़े लड़के को खूब लताड़ा। दोनों भाईयों ने बाहर जाते कहा—"हम कोई बेवकूफ नहीं हैं। दुनिया देखी है। तुम दोनों को अदालत में घसीटेंगे। देखें कहाँ जाती है जायदाद!"

उन्होंने ठीक वही किया, जिसकी उन्होंने धमकी दी थी। उन्होंने अदालत में माँ और छोटे भाई के विरुद्ध दावा दायर कर दिया। माँ और पिंगल को अदालत से बुलावा आया। विवश होकर वे दोनों अदालत में गये। क्योंकि न्यायाधिकारी ने दोनों बड़े भाइयों से रिश्वत ले रखी थी, इसलिए उसने, पिंगल और माँ के विरुद्ध फ़ैसला दिया।

पिंगल ने इस अन्याय पर अपील की। वह एक महीने लगातार अदालत आता जाता रहा। आख़िर उसके अनुकूल फ़ैसला हुआ।

यद्यपि फ़ैसला उनके अनुकूल हुआ था, तो भी इधर उधर के समझौते में, वकीलों की फ़ीस देने में, अदालत के खर्च में, पिंगल और माँ की जायदाद ख़त्म हो गई। जीवदत्त और लक्षदत्त का भी पैसा बहुत खर्च हुआ और वे गरीब हो गये। आय का उन दोनों के लिए कोई रास्ता न था, इसलिये वे गलियों में घूम-फिर कर भीख माँगने लगे।

पिंगल को अपने दुर्भाग्य पर चिन्ता न थी। उसने माँ को भी ढाँढस बँधाया। एक जाल लेकर वह नदी में मछली पकड़ने चला गया। यद्यपि उसे मछली पकड़नी न आती थी, तो भी नदी में से वह काफ़ी मछली पकड़ लाया। उसने उन्हें बाज़ार में बेचा और उस पैसे से दुकान से खाने-पीने की चीज़ें ले आया।

इस तरह पिंगल सवेरे से शाम तक मछलियाँ पकड़ता और उन्हें बाज़ार में बेचकर जो पैसा मिलता उससे गुज़ारा करता। एक तरह से दोनों सुखी थे। थोड़े दिनों में यह बात भाइयों को भी मालूम हो गई। जब वह मछली पकड़ने गया हुआ था तो वे उसके घर पहुँचे और माँ के सामने जाकर कहने लगे कि भूख लग रही है। यद्यपि उन दोनों ने उसको बहुत तंग किया था, तो भी मातृ-हृदय था। वह सब भूलकर उसने उनको भोजन दिया।

जीवदत्त और लक्षदत्त ने कृतज्ञता प्रकट की। और उसके सामने पिछले बुरे कार्यों के लिए पश्चाताप प्रकट किया। माँ को भी उन पर दया आई। उसने उनसे कहा कि मछलियाँ पकड़ने के लिए भाई के चले जाने के बाद, वे रोज़ आकर भोजन कर जाया करें। कभी काम करने की आदत न थी, इसलिए उन दोनों आलसी भाइयों को, अपनी माँ की बात पर बहुत खुशी हुई और गली में चले गये।

पिंगल यह कुछ न जानता था, जाल लेकर नदी चला जाता।

एक दिन वह बहुत देर तक जाल फेंकता रहा, पर एक मछली भी न फसी। वह सूर्यास्त तक प्रयत्न करता रहा, पर भाग्य ने उसका साथ न दिया। आखिर वह जाल कन्धे पर डाल, उदास हो घर की ओर चला। रास्ते में वह दुकान थी, जहाँ वह रोज़ घर के लिए खाने-पीने की चीज़ें खरीदता था। वह वहाँ न गया। उसको आता देख, दुकानदार ने उसे आवाज़ लगाई।

पिंगल ने दुकानदार के पास जाकर कहा कि एक भी मछली न फँसी थी, इसलिए उसके पास कुछ भी खरीदने के लिए पैसे न थे। यह सुन दुकानदार ने हँसकर कहा—"तुम रोज़ ज़रूरी चीज़ें यहीं से खरीदकर ले जाते हो न! इसलिए आज अगर पैसे नहीं हैं तो क्या हो गया! चीज़ें ले जाओ। कल पैसा दे देना।"

पिंगल ने दुकानदार को धन्यवाद दिया और आवश्यक चीज़ें लेकर रोज़ के समय से पहिले ही वह घर चला गया। उस समय उसके दोनों भाई अन्दर भोजन करते माँ से बातें कर रहे थे। अकस्मात् पिंगल को आया देखकर, उन दोनों भाइयों ने घर से बाहर भागने की सोची।
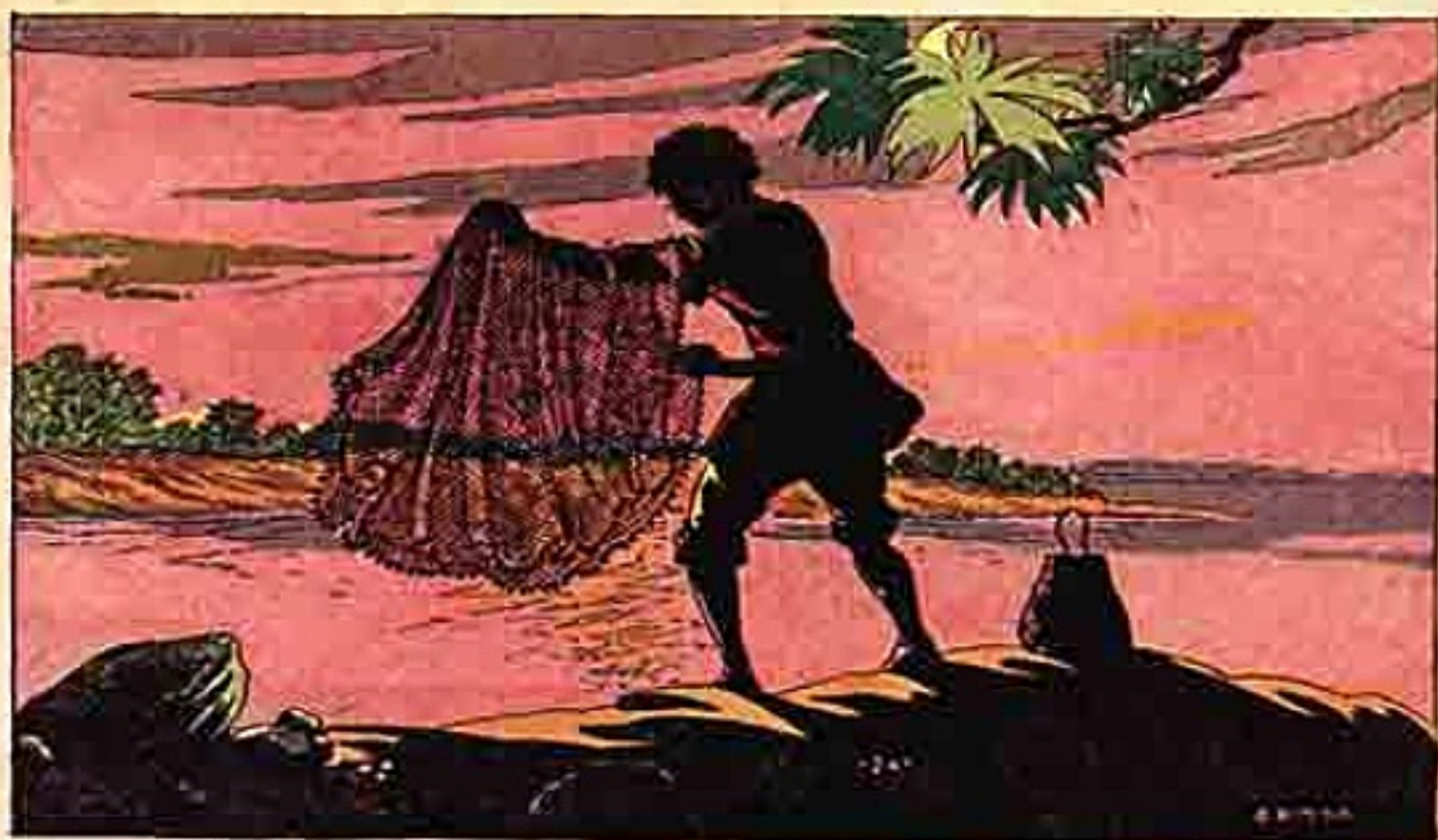
पिंगल ने दोनों भाइयों को देखते ही गले लगाया और कहा—"भाइयो! जो मेरे पास है, आराम से खाओ। जो हो गया सो हो गया। हम सब एक ही पिता की तो सन्तान हैं!"

छोटे भाई के यह कहते ही बड़े भाई बड़े खुश हुए। उन्होंने कहा—"हमें नहीं मालूम था कि तुम इतने अच्छे हो। मालूम होता तो फ़िज़ूल हम तुम पर दावा न करते, न तुम्हें बरबाद करते, न खुद ही बरबाद होते।" माँ भी तीनों भाइयों को यों अकस्मात आपस में मिलते देख, बड़ी प्रसन्न हुई।

पिंगल, अगले दिन भी, यथा समय नदी गया। उस रोज़ भी उसने बड़ी मेहनत की; पर जाल में एक भी मछली न आई। वह अपनी किस्मत पर रोता घर जा रहा था कि दुकानवाले ने उसे फिर बुलाया, और उसकी हालत देख फिर चीज़ें उसको उधार दीं। पिंगल कल का भरोसा करके चीज़ें लेकर घर गया।

पर दूसरे दिन भी उसे निराश ही होना पड़ा। इस तरह, लगातार, दस दिन उसे कोई मछली न मिली। पिंगल ग्यारहवें दिन अपनी पुरानी जगह छोड़कर तोता

झील मछलियाँ पकड़ने गया। वह वहाँ से दो मील के क़रीब थी।

झील में जाल फेंककर वह किनारे पर बैठा ही था कि दूर मैदान में धूल उड़ी। कोई घुड़-सवार आता लगता था। पिंगल अभी सोच रहा था कि वह घुड़-सवार कौन हो सकता है, इतने में वह तेज़ी से सीधे पिंगल के पास चला आया। उसने घोड़े पर से उतरते हुए कहा—"देखो, पिंगल! तुम्हें मेरी एक मदद करनी होगी। कहो!" वह आदमी पिंगल के लिए बिल्कुल अजनबी था। पर उसको नाम से पुकारता देख उसे आश्चर्य हुआ। उसने अजनबी की ओर देखकर सविनय पूछा—"आप मेरा नाम कैसे जानते हैं? आप क्या सहायता चाहते हैं?"

अजनबी यह सुनकर हँसा। उसने कहा—"तुम्हारा नाम क्या है? तुम कब इस झील में मछलियाँ पकड़ोगे....वह सब हमारे गुरु ने तुम्हारे पैदा होने के पहिले ही बता दिया था। यह चालीस साल पहिले की बात है। ख़ैर, वह बात अब छोड़ो। मेरी मदद कर सकोगे?"

"कहिये जी! मैं आपकी मदद करने को तैयार हूँ; पर अभी आपने अपना नाम नहीं बताया!"—पिंगल ने कहा।

"मेरा नाम मण्डन है। जो मैं तुम्हें करने लिए कह रहा हूँ, वह कोई कठिन काम नहीं है। मेरे हाथ बाँधकर मुझे झील में फेंक दो। थोड़ी देर बाद जब मेरा सिर ऊपर दिखाई दे तब मुझे जाल डालकर खींच लेना। अगर पैर दिखाई दें तो फौरन इस घोड़े को ले जाकर शहर में, काँचन मिश्र नाम के एक व्यापारी को सौंप देना। वह इससे बहुत खुश होकर तुम्हें इसके बदले में सौ मुहरें देगा।"

पिंगल एक मिनट तक सोचता रहा। फिर वह यह करने के लिए मान गया। मण्डन ने घोड़े की जीन में से लटकती हुई रस्सी को लाकर पिंगल के हाथ में रखा। उससे उसने मण्डन के हाथ पीछे बाँध दिये, जैसा कि उसने कहा था। फिर उसको कन्धे पर डालकर वह किनारे के टीले पर गया। वहाँ खड़े होकर, एक दो क्षण के लिए वह कुछ सोचता रहा और सोचते सोचते उसे झील में फेंक दिया।

दो तीन मिनट तालाब में तरंगें आती रहीं, फिर मण्डन के पैर ऊपर तैर आये। "बेचारा मर गया"— पिंगल उसका घोड़ा लेकर शहर की ओर चला। काँचन मिश्र की दुकान मालूम करने में उसे कोई दिक्कत न हुई। उसके साथ का घोड़ा देखकर काँचन मिश्र ने कहा—"लोभ दुख का कारण है" उसने सौ मुहरें पिंगल को देते हुए कहा—"यह बात किसी से न कहना। गुप्त ही रखना; क्योंकि इसमें तुम्हारा ही भला है।"

(अभी और है)

कुबड़ा दूल्हा

हंस द्वीप का एक राजा था। उसके इन्दुमति नाम की एक लड़की थी। उसकी देखभाल करने के लिये एक आया थी। इन्दुमति हमेशा बाग़-बगीचे में घूमती रहती और जो कोई पशु-पक्षी उसे वहाँ दिखाई देता, उसके बारे में पूछ-ताछ करती।

इन्दुमति ने एक दिन एक गिरगिट देखी। प्रलय के पहिले ये पहाड़ जितनी बड़ी हो गई थी। भूमि ब्रह्मा के सामने जाकर रोई-धोई कि वह उनके भार को न उठा सकेगी। ब्रह्मा ने उनकी वृद्धि रोक दी। यह कहानी आया ने राजकुमारी को सुनाई। इन्दुमति को वह गिरगिट पसन्द आई। उसे ले जाकर उसने पिता की गोद में डाल दी।

राजा किसी और ख्याल में था। गिरगिट के पड़ते ही वह घबरा गया। उसे लड़की पर बड़ा गुस्सा आया।

नादान इन्दुमति ने खिल खिलाकर हँसते हुए कहा—"इस छोटी गिरगिट को देखकर ही डर गये हो! अगर यह और बड़ी हो गई तो क्या करोगे!"

"जब तक यह तेरी जितनी बड़ी नहीं हो जाती, तब तक तेरी शादी न करूँगा। देख, क्या करता हूँ।"—राजा ने गुस्से में कहा।

"यह क्या बात है महाराज! छोटी लड़की है। अनजाने कह बैठी है, माफ़ कीजिये।" मन्त्री आदि, ने कहा।

राजा ने ज़रा और ऐंठते हुए कहा—"जो मेरे मुख से निकल गया है, वह होकर ही रहेगा।"

राजा के यह कहते ही, आया इन्दुमति को गले लगाकर रोने लगी—"शायद मेरी छोटी मुन्नी की शादी ही न हो। मैं क्या करूँ! हाय रे भगवान!"

कुमारी शान्ति भटनागर
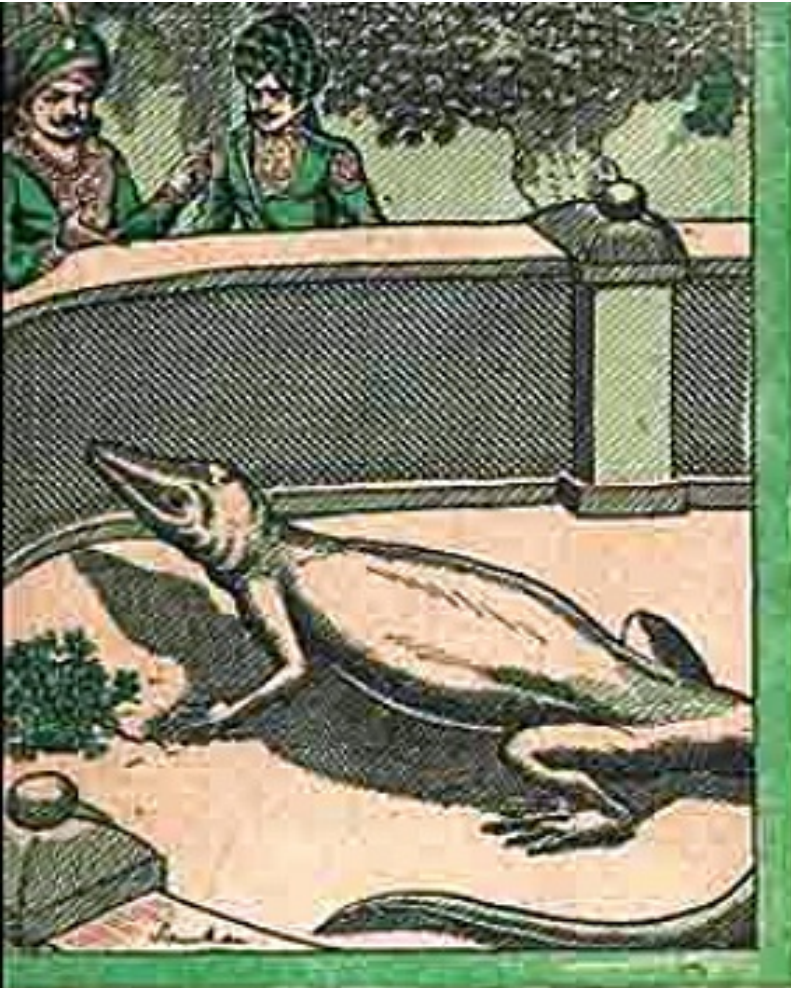
"रो मत! गिरगिट बड़ी होगी न?" इन्दुमति ने कहा।

"बड़ी नहीं होगी। ब्रह्मा का शाप है न!" आया ने कहा।

तब से रोज़ इन्दुमति मन ही मन प्रार्थना करने लगी—'हे ब्रह्मा! गिरगिट पर से शाप हटा दो, उसे मेरे जितना बड़ा कर दो।'

ब्रह्मा ने यह शाप तो हटा दिया पर यह बात साधारण न थी। वह रोज़ रोज़ एक एक अंगुली बढ़ती गई और जब इन्दुमति विवाह योग्या हुई तो वह भी एक बड़े अजगर जितनी बड़ी हो गई।

यह देख राजा बड़ा खुश हुआ। उसने गुस्से में कह ज़रूर दिया था। पर उसे डर था कि कहीं कहे अनुसार करना न पड़ जाये। अब सौभाग्य से उसका वह डर जाता रहा।

एक दिन मन्त्री ने आकर राजा से पूछा—"महाराज! राजकुमारी के विवाह के बारे में क्या सोचा है?"

"राजकुमारी ने जो गिरगिट पाल रखी है उसको मरवाकर उसका कलेजा बाहर निकलवा दीजिये। बेटी के विवाह के लिये सब देशों में निमन्त्रण भेजिये। निमन्त्रित व्यक्तियों में से जो कोई यह बता सकेगा कि यह कलेजा किस जन्तु का है, उसके साथ लड़की की शादी कर देंगे। बड़ा अक्लमन्द ही पता लगा सकेगा।" राजा ने कहा।

मन्त्री ने आज्ञानुसार करवा दिया, और गिरगिट के कलेजे को एक काँच के मर्तबान में रखवा दिया। फिर इन्दुमति की विवाह-तिथि इस प्रकार निश्चित की गई कि दूर दूर से निमन्त्रित व्यक्ति भी ठीक समय पर आ सकें।

राजकुमारी के विवाह की विचित्र व्यवस्था को देखकर आया बड़ी घबराई।

"यह राजा कोप करे तो आफ़त है, कृपा करे तो भी। क्या कोई यह मालूम कर सकेगा कि यह कलेजा गिरगिट का है? यह लड़की की शादी न करने के लिये ही ये सब चालें चल रहा है। अच्छी बात है।" आया ने सोचा।

विवाह की तिथि पास आई। दूर दूर से अतिथि आने लगे। आया उनके रहने की जगह पर गई। और एक एक को गौर से देख आई। कोई भी उसे न जंचा। "सब यों ही हैं, कोई भी इन्दुमति के लायक नहीं।" आया ने सोचा।

इतने में तोते द्वीप का राजकुमार वहाँ आया। वह दूसरों में, तारों में चान्द की तरह था। बहुत खूबसूरत था। अक़्लमन्द भी। इन्दुमति की जोड़ी का था। आया ने निश्चय किया—कुछ भी हो, उसके साथ ही राजकुमारी का विवाह होना चाहिये।

वह अन्तःपुर वापिस गई। वहाँ काम करनेवाले चार कुबड़ों में एक विश्वस्त कुबड़े को बुलाकर कहा—"अरे! कल राजकुमारी का स्वयंवर है। काँच के मर्तबान में रखे दिल को दिखाकर निमन्त्रित व्यक्तियों से पूछा जायेगा कि वह किस पशु का है। जो यह बतायेगा, उसके साथ राजकुमारी की शादी होगी। इसलिये जैसे भी हो आज रात को तोते द्वीप के राजकुमार के पास जाकर बता आ कि मर्तबान में रखा दिल गिरगिट का है। अगर तू यह काम कर आया तो मैं तुझे अच्छा इनाम दूँगी। देख, यह किसी और को पता चला तो तेरा सिर कटवा दूँगी! खबरदार!"

कुबड़ा मान गया। पर उस रात को वह तोते द्वीप के राजकुमार से न मिला। उतने अतिथियों में, बिना किसी और के जाने, राजकुमार से यह कहना बहुत कठिन

था। कुबड़े को दुर्बुद्धि भी सूझी। "जब राजकुमारी से विवाह करने के लिए वह आवश्यक रहस्य जानता है, तब दूसरों से क्यों कहा जाय? मैं स्वयं ही उनसे शादी कर सकता हूँ।" इसलिये वह जाकर आराम से सो गया।

अगले दिन सब अतिथि राजमहल में आये। राजा ने उन सब को काँच का मर्तबान दिखाकर कहा—"इसमें किस जन्तु का दिल है? जो यह बता देगा, उसके साथ मैं अपनी लड़की की शादी कर दूँगा और आधा राज्य दूँगा।"

जिसको जो सूझा उसने वह बताया। पर किसीने भी कुत्ते से छोटे जानवर का नाम न लिया। कई ने यह भी कहा कि वह हाथी का दिल था। सबके बाद, कुबड़े ने आगे आकर कहा—"महाराज! अगर मैं यह बता दूँ कि यह दिल किस जन्तु का है तो क्या आप राजकुमारी का मुझ से विवाह करेंगे? मुझे आधा राज्य देंगे?"

"मैं अपनी बात का पक्का हूँ। जानते हो तो कहो?" राजा ने कहा।

"यह गिरगिट का दिल है।"—कुबड़े ने कहा।
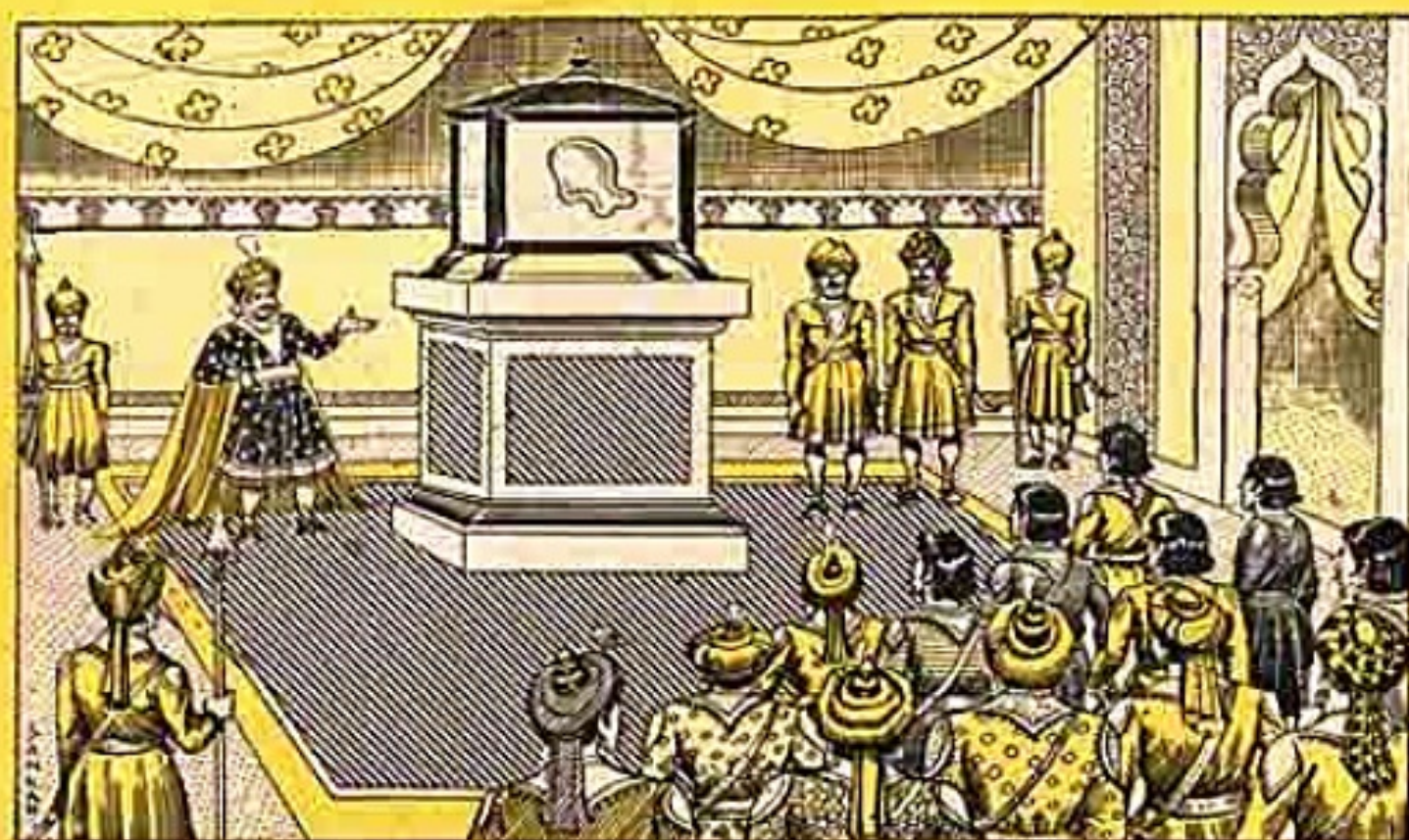
सब खिल खिलाकर हँसे। राजा ने गम्भीर होकर कहा—"हँसिये मत। उसने ठीक कहा है। यह दिल एक गिरगिट का है। वचन के अनुसार राजकुमारी का विवाह इस कुबड़े से होगा.... उसे आधा राज्य भी मिलेगा....अतिथियों से प्रार्थना है कि वे विवाहोत्सव में भाग लेकर हमें अनुगृहीत करें।"

झट सजा-धजाकर, कुबड़े को दुल्हा बना दिया गया। उसके बाद दावत हुई। उस समय मनोरंजन का भी प्रबन्ध किया गया। तीनों कुबड़ों ने मिलकर ऐसा मनोरंजन किया कि अतिथियों का हँसते-हँसते पेट फूल गया। फिर उन्होंने दूल्हे के पास जाकर कहा—"अब तुम राजा होने जा रहे हो। राजकुमारी से शादी करने जा रहे हो। बड़े हो गये हो। हमें ईनाम देकर खुश करो।"

कुबड़े को गुस्सा आ गया। वह अपने आसन से उठा और उन तीनों कुबड़ों का गला पकड़कर धकेलते हुए उसने कहा—"जाओ बाहर, कुबड़े कहीं के।"

राजकुमारी को उन्हें देखकर दया आ गई। उसने एक नौकर से धीमे से कहा–

"उन्हें मेरे कमरे में ले जाओ। मैं अभी आकर उनको ईनाम दूँगी।"

भोजन के बाद, इन्दुमति जल्दी जल्दी अपने कमरे में गई। उसकी कुबड़े प्रतीक्षा कर रहे थे। इन्दुमति ने किवाड़ बन्दकर दिये। कुबड़ों को इनाम देने के लिये उसने सन्दूक खोलकर जेवर-जवाहरात, कपड़े-लत्ते बाहर रख दिये।

इतने में बाहर किसी के आने की आहट सुनाई दी। दरवाज़ा किसी ने खटखटाया।

"कौन हैं?" इन्दुमति ने पूछा। राजा और दुल्हे ने जवाब दिया।

इन्दुमति को कुछ न सूझा कि क्या करे। उसने कुबड़ों को सन्दूक में रखकर ताला लगा दिया। फिर उसने किवाड़ खोला। इन्दुमति के पिता और होनेवाले पति कमरे में घुसे।

बहुत देर हो गई, पर वे बाहर न गये। उसके पिता ने बहुत बड़ा उपदेश दिया। कहा कि वचन देकर मुकर जाना उनके वंश में नहीं है। पिता की आज्ञा का पालन करना पुत्री का धर्म है। पति के सिवाय, स्त्री के लिये कोई और परमात्मा नहीं है। महाराजाओं में भी कुबड़े हैं। शाम तक, महाराजा लड़की से बातें करता रहा, फिर दूल्हे के साथ विवाह की तैयारियाँ देखने चला गया। विवाह का मुहूर्त आधी रात में था।

उनके जाते ही इन्दुमति ने सन्दूकों के ताले खोले। पर तब तक कुबड़े साँस घुटकर मर चुके थे। इन्दुमति ने अपनी आया से जो कुछ गुज़रा था, कहा।

आया तुरत शहर में जाकर एक हट्टे-कट्टे आदमी को बुला लाई। उससे कहा—'अरे, तुम्हें एक ज़रूरी काम छुपकर करना होगा। राज महल में

एक गट्ठर है। उसे ले जाकर अन्धेरे में समुद्र में फेंक देना होगा। काम पूरा होने पर बीस रुपये दूँगी।" ईन्धन काट-कूटकर बेचनेवाले उस गरीब को यह रक़म बहुत बड़ी लगी।

आया उसको साथ लेकर इन्दुमति के कमरे में गयी। वहाँ एक बोरा था। उस बोरे को उठाकर वह आदमी चला गया। उसे समुद्र में फेंक कर वह अपने बीस रुपये वसूल करने आया। पर बोरा वहीं का वहीं पड़ा था।

"यह बोरा बड़ा धोखेबाज़ है। तुम्हें चकमा देकर वापिस आ गया है। कम से कम इस बार तो समुद्र में फेंक आओ"—आया ने कहा।

इस बार, गहरे समुद्र में जाकर उस लकड़हारे ने बोरे को फेंक दिया। पर जब वापिस आया तो बोरा फिर उसी जगह पर था।

लकड़हारे को बड़ा गुस्सा आया। बोरे के समुद्र के पास ले जाकर, उसने खोला। उसमें उसे कुबड़े का शव दिखाई दिया।

"यह दिखाते हो कि मर गये हो! तेरी चालाकी मेरे सामने नहीं चलेगी।"

उसने कुल्हाड़ी से उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। और उनको समुद्र में फेंक दिया। और खाली बोरा लेकर वापिस गया।

वह राजकुमारी के कमरे में जाने के लिए सीढ़ियाँ चढ़ रहा था कि उसको सामने कुबड़ा दिखाई दिया।

"अरे! ग़जब है! टुकड़े टुकड़े करके फेंक दिया। तब भी जीते हो! देख अब क्या करता हूँ!"—कहता कहता, वह जल्दी जल्दी सीढ़ियों पर चढ़ा। कुबड़े को पकड़कर उसका गला घोंट दिया। गले में कपड़े ठूँस दिये। उसे ले गया। उसने

अपने घर के पास ही चिता बनाकर उसे बोरे के साथ जला दिया। और उसकी राख ले जाकर समुद्र में मिला दी। काफ़ी देर बाद, उसने आया के पास जाकर कहा—"बड़ी मेहनत की है। ईनाम दिलवाइये।"

"इतनी देर क्या करते रहे!"—आया ने पूछा।

"उस कुबड़े को मैं तीन बार समुद्र में फेंक आया। पर चौथी बार फिर मेरे सामने आ मरा। ज़रीदार कपड़े पहनकर, मैंने उसे सीढ़ियों पर चढ़ते देखा। उसे चौथी बार पकड़कर, जलाकर उसकी राख समुद्र में डाल आया हूँ।" लकड़हारे ने कहा।

यह सुनते ही इन्दुमति और आया की खुशी का ठिकाना न रहा। आया ने उसे मोतियों की एक थैली ईनाम में दी। राजकुमारी ने अपने गले का हार दिया वह हज़ार बार झुक झुककर प्रणाम करके चला गया।

मुहूर्त पास आ गया। कुबड़े दुल्हे का कहीं पता न लगा। आया ने जाकर राजा से कहा—"महाराजा! एक पहर पहिले दूल्हे सीढ़ियों से नीचे गिर पड़े थे। उनकी कमर टूट गई, और वे मर गये। कहीं ऐसा न हो कि यह सब को मालूम हो जाये, मैंने उनका दहन-संस्कार भी करवा-दिया है। परन्तु इस कारण राजकुमारी की शादी रोकने की कोई ज़रूरत नहीं। तोते द्वीप के राजकुमार से उनकी शादी कर दीजिये। उन दोनों की जोड़ी अच्छी रहेगी।"

राजा यह मान गया। राजकुमार और राजकुमारी का विवाह वैभव से मनाया गया।

काला अक्षर भैंस बराबर !

एक गाँव में एक पंडित रहा करता था। उसके एक लड़की थी। उस लड़की ने संस्कृत पढ़ी थी। व्याकरण का भी उसे अच्छा ज्ञान था।

वह विवाह के योग्य हुई। उसके पिता ने उसकी शादी करने की सोची और वर के लिए कई गाँवों में खोज की। आखिर, उसे एक गाँव में एक ब्रह्मचारी दिखाई दिया। वह देखने में तो खूबसूरत था। पर पढ़ाई में सुस्त था। शब्द-मंजरी में एक शब्द पढ़कर हिम्मत हार गया था। पढ़ाई छोड़ दी थी। यह बात ब्राह्मण को नहीं मालूम थी।

पंडित उस ब्रह्मचारी को साथ घर ले गया। लड़की से कहा—"देख बेटी! यह तुझे पसन्द है कि नहीं?"

पंडित की लड़की उसको देखते ही समझ गयी कि ब्रह्मचारी काला अक्षर भैंस बराबर था। उसने ब्रह्मचारी से पूछा—"विहस्य, विहाय, अहं, कथं" ये शब्द किस विभक्ति के हैं?

सच पूछा जाय तो वे विभाक्तियाँ न थीं। "विहस्य" का मतलब है "हँसकर"। उसी तरह "विहाय" का अर्थ है "छोड़कर"। "अहं" का मतलब है "मैं"। "कथं" का मतलब है "कैसे"। पर ब्रह्मचारी यह न जानता था।

वह राम शब्द रट गया। उसने कहा "रामस्य" की तरह "विहस्य" भी षष्ठि विभक्ति है। "रामस्य" की तरह "विहाय" भी चतुर्थी विभक्ति है। "राम" की तरह "अहं" "कथं" द्वितीय विभक्ति है।

तुरत पंडित की लड़की ने कहा।

"यस्य षष्ठी चतुर्थीस्यात्, विहस्यच विहायच,
अहं कथं, द्वितीयास्यात, द्वितीयास्या महं कथं।"

(जो विहस्य और विहाय को चतुर्थी और षष्ठि विभक्ति समझें, अहं और कथं, को द्वितीय विभक्ति कहे, उसकी पत्नी मैं कैसे हो सकती हूँ?)

यह सुन ब्रह्मचारी लज्जित हुआ और चला गया।

नाविक सिन्दबाद

जब हम पर मुसीबतें पड़ रही होती हैं, तब हम सोचते हैं कि हम इन्हें कैसे सह सकेंगे, या वे कब गुज़रेंगी। परन्तु जब वे ख़तम हो जाती हैं, और अच्छे दिन आते हैं और हम पीछे मुड़कर देखते हैं तो उन मुसीबतों में ही एक प्रकार का आनन्द आता है। उन्हें बार बार याद करने की इच्छा होती है। हमें आश्चर्य भी होता है कि हम उनके बारे में इतना क्यों घबरा गये थे।

तीन समुद्र यात्राएँ पूरी कर चुका था। घर में बैठा आराम से ऐश उड़ा रहा था। कोई चिन्ता न थी। फिर मेरे मन में यह बात आयी कि दुनियाँ का दौरा करके तजर्बा पाना ही उससे कहीं अच्छा था। व्यापार करके फिर पैसा कमाने की सूझी। होते होते यह इच्छा इतनी प्रबल हो उठी कि मैं घर में एक घड़ी भी न रुक सका। इसीलिए कहा जाता है कि घूमनेवाले पैर और डाँटनेवाली ज़बान, कभी बेकाम नहीं रहती।

चौथी समुद्र - यात्रा

CHITRA

मानों भाग्य ने धकेल दिया हो, घर-बार, ज़मीन-जायदाद, सब छोड़कर पहिले से अधिक क़ीमती चीज़ें ख़रीदकर मैं उन्हें ले, बसरा पहुँचा। वहाँ एक बड़ा जहाज़ मैंने पकड़ा। उसमें कई बसरा के व्यापारी भी थे।

वह जहाज़ बड़ी तेज़ी से चला। वह कई द्वीप और देश गया। जहाँ कहीं वह लंगर डालता खूब व्यापार होता खूब नफ़ा भी होता।

एक बार अचानक बीच समुद्र में लंगर डालकर कप्तान ने बड़े ज़ोर से चिल्लाते हुए कहा—"अब हमारा काम तमाम हो गया है। खुदा का नाम लो।" उसी समय तूफ़ान चला। बड़ी बड़ी तरंगें.... हाथियों की तरह, जहाज़ से टकराने लगीं। थोड़ी देर में ही उनकी चोट से जहाज़ टुकड़े टुकड़े हो गया। जहाज़ में जितना माल रखा था समुद्र ने निगल लिया। कई व्यापारी देखते देखते अपने माल के साथ समुद्र के पेट में समा गये।

अल्लाह की मेहरबानी से मैं और कुछ व्यापारी, एक बड़े शहतीर पर जा बैठे। लहरों ने हमें इधर उधर लताड़ा। फिर हवा ने हमें किनारे पर जा पटका।

तूफ़ान के कारण हमारी इतनी बुरी हालत थी कि जो किनारे पर पड़े, वहीं रात भर बेसुध सोते रहे।

सवेरे उठने पर ऐसा लगा जैसे थोड़ी-सी ताकत आ गई हो। उठ खड़े हुए। हमने चारों ओर निगाह दौड़ायी। फिर अन्दर की ओर गये। थोड़ी दूरी पर हमें एक महल दिखाई दिया। हमारे देखते देखते उस महल की ड्योढ़ी में से, काले कलूटे व्यक्ति भागे भागे हमारी तरफ़ आये। वे पशुओं के चमड़े के कपड़े पहिने हुए थे। बिना कुछ कहे-सुने वे हमें उस बड़े महल में ले गये। वहाँ एक ऊँचे सिंहासन पर, एक राजा बैठा हुआ था। हमें बैठने के लिए उन्होंने संकेत किया। हम बैठ गये।

क्षण में ही उन काले कलूटों ने हमारे सामने ऐसा भोजन परोसा, जिसके बारे में हमने न कभी सुना था, न देखा ही था। उसको देखकर मुझे छूने की भी इच्छा नहीं हुई। मुझे कोई सन्देह हो रहा था। पर चूँकि मेरे मित्र बहुत भूखे थे, वे जल्दी जल्दी चाट चाटकर सारा भोजन हजम कर गये। मेरा वह भोजन न खाना ही अच्छा था, यह मुझे बाद में मालूम हुआ।

मेरे दोस्त जैसे जसे खाते जाते थे, वैसे वैसे उनकी भूख भी बढ़ती जाती थी। मुझे उनका व्यवहार अच्छा न लगा। वे घंटों खाते रहे। खाते खाते, उनका खाने का तरीका भी पशुओं का-सा हो गया।

वे खा ही रहे थे कि काले-कलूटों ने किसी मर्तबान में से कुछ लेकर, उनके शरीर पर पोतना शुरू किया। इसके बाद, मैंने अपने मित्रों के पेट एक एक अंगुली फूलते देखा। ज्यों ज्यों उनका पेट बढ़ता जाता था, त्यों त्यों उनकी भूख भी बढ़ती

जाती थी। उनकी भूख न मिटता देख, मैं अचरज में पड़ गया।

यह सब देखता मैं भला मुख में कौर कैसे रखता? जब मेरे शरीर पर उन्होंने कुछ पोतना चाहा तो मैंने मना कर दिया। यह अच्छा ही हुआ। क्योंकि मुझे जल्दी ही मालूम हो गया कि वे नर-भक्षक थे और मनुष्य की चरबी बढ़ाने के लिए ही वे इस तरह खिलाते थे। मुझे इस बात का भी पता लग गया कि रोज़ उनका राजा एक एक मनुष्य को भून कर खाता था, जब कि बाकी काले-कलूटे उसे कच्चा ही चबा जाते थे।

यह मालूम होने पर मुझे डर लगने लगा कि मेरी और मेरे मित्रों की क्या गति होगी? यह आफ़त कैसे दूर की जा सकती है? पेट के बढ़ने के साथ साथ मेरे मित्रों की अक़्ल भी मारी जा रही थी। आख़िर वे शिकार के पशुओं की तरह हो गये। वे काले कलूटे सब उनको हरे मैदान में चराने के लिए ले गये।

मैं भय और भूख से सूखकर काँटा हो गया। उनको मुझ पर थोड़ा भी लालच न रहा। वे मुझे भूल गये। इसलिए मैं उनके महल से एक दिन बाहर निकल गया और द्वीप के किनारे-किनारे चलने लगा। मैं इस प्रयत्न में रहा कि कोई मुझे न देख ले। पर रास्ते में, मुझे मेरे मित्रों को हाँककर ले जाते हुए काले कलूटे दिखाई दिये। उनकी नज़र बचाने के लिए, मैं पेड़ों की आड़ में छुप गया।

मैं रात भर बिना रुके चलता गया। नर-भक्षकों से दूर भागने की फ़िक्र में मुझे नींद भी न आई। रास्ते में, कन्द-मूल खाते हुए, लगातार छः दिन, छः रात चलकर, मैं एक ऐसी जगह पहुँचा, जहाँ

हम जैसे लोग रहते थे। यह जगह द्वीप के पहले किनारे पर थी। उन लोगों ने मेरी भाषा में बातचीत करते हुए मुझे घेर लिया। तब मुझे बहुत खुशी हुई। मुझे अपनी भाषा सुने ज़माना हो गया था। मैंने उनको अपने कष्टों के बारे में कहा। मुझे मौत के मुँह से ज़िन्दा वापिस आया देख, उन्होंने मुझे तरह तरह की चीज़ें खिलाईं। मेरी बड़ी आवभगत की। एक घंटा आराम करने के बाद, वे मुझे अपनी नौकाओं में अपने राजा के पास ले गये। वह राजा एक और द्वीप में रहा करता था।

राजधानी में भीड़-भड़ाका अधिक था दुकानों में हर तरह की चीज़ें थीं। सड़कें चौड़ी और साफ़ थीं। सड़कों पर, अच्छी नस्ल के घोड़ों पर, बिना ज़ीन के कई लोग इधर उधर चढ़े जा रहे थे। मैंने राजा के दर्शन करके पूछा—"आपके देश में, लोग बिना ज़ीन के घोड़ों की सवारी कर रहे हैं। इसकी क्या वजह है? सवारी के लिए ज़ीन का होना अच्छा ही है न?"

"ज़ीन का क्या मतलब है? हमने तो उसे कभी देखा नहीं।"—राजा ने आश्चर्य के साथ कहा।

"ऐसी बात है, तो मुझे एक बनाने की इज़ाज़त दीजिये। उससे आपको बड़ा आराम मिलेगा। यह आप खुद देख लेंगे।"—मैंने कहा।
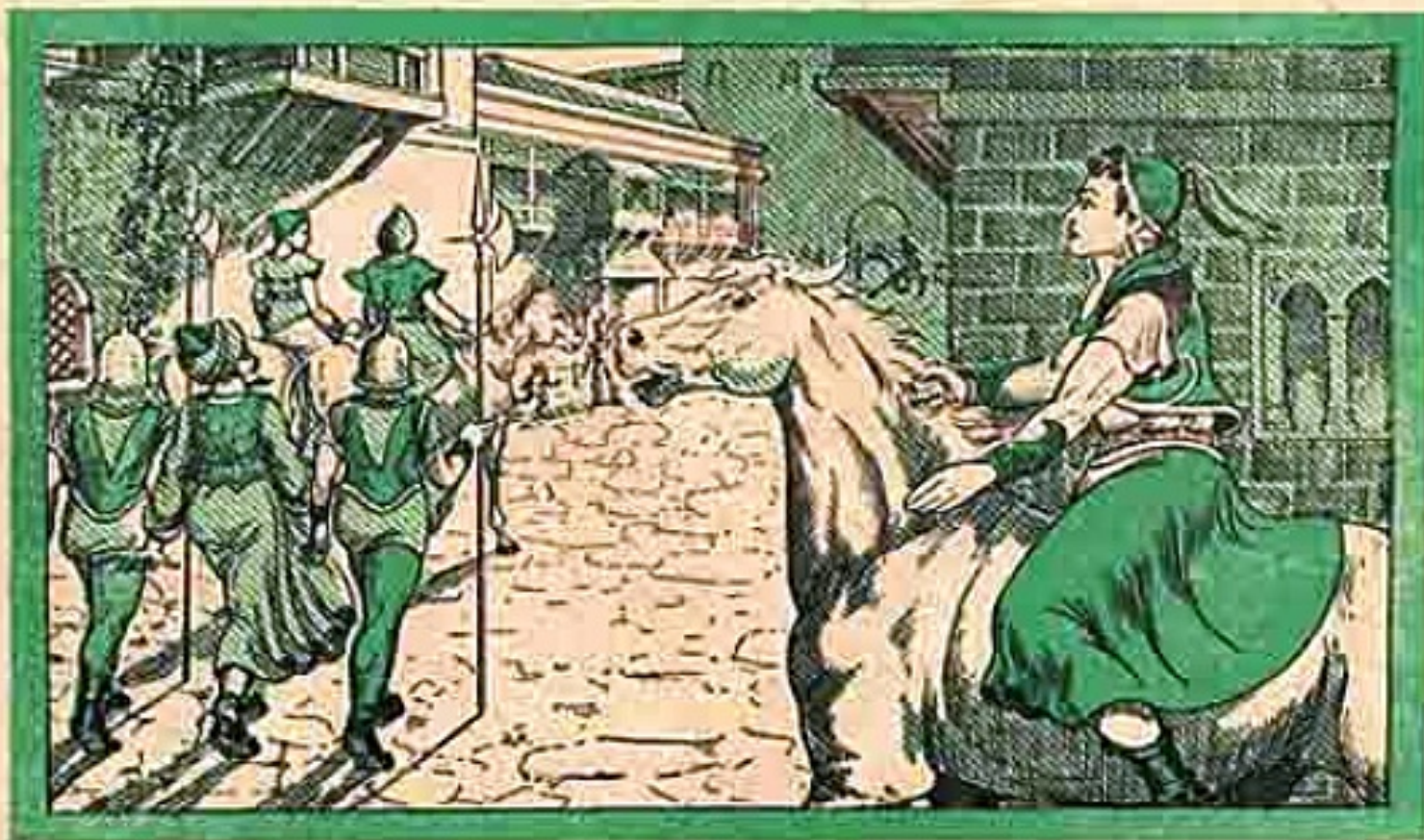
राजा मान गया। एक कारीगर बढ़ई को बुलाकर, उससे एक अच्छी काठ की ज़ीन बनवाई। फिर उसके लिए एक पंखोंवाला गद्दा तैयार करवाया, उसके ऊपर चमड़ा चढ़वाकर उस पर रंग बिरंगी किनारियाँ बनवाईं। तब एक लोहार के पास जाकर लगाम लगाने के लिए एक लोहे का टुकड़ा बनवाया। दो रिकाब तैयार करवाईं। क्योंकि मैं खुद देखरेख कर रहा था इसलिए जैसा मैंने चाहा वैसा उसने बनाकर दे दिया।

यह सब बन जाने के बाद, मैं अस्तबल में गया और वहाँ बँधे घोड़ों में से एक अच्छे घोड़े को चुनकर, मैंने उस पर ज़ीन लगा दी। उसके गले में झालरें बाँध दीं। फिर उसको ले जाकर राजा के सामने पेश किया। राजा घोड़े पर चढ़ा। ज़ीन का आराम, लगाम के कारण घोड़े को काबू में रखने की सुभीता देखकर वह बहुत खुश हुआ। उसने मुझे बहुत-कुछ ईनाम दिया।
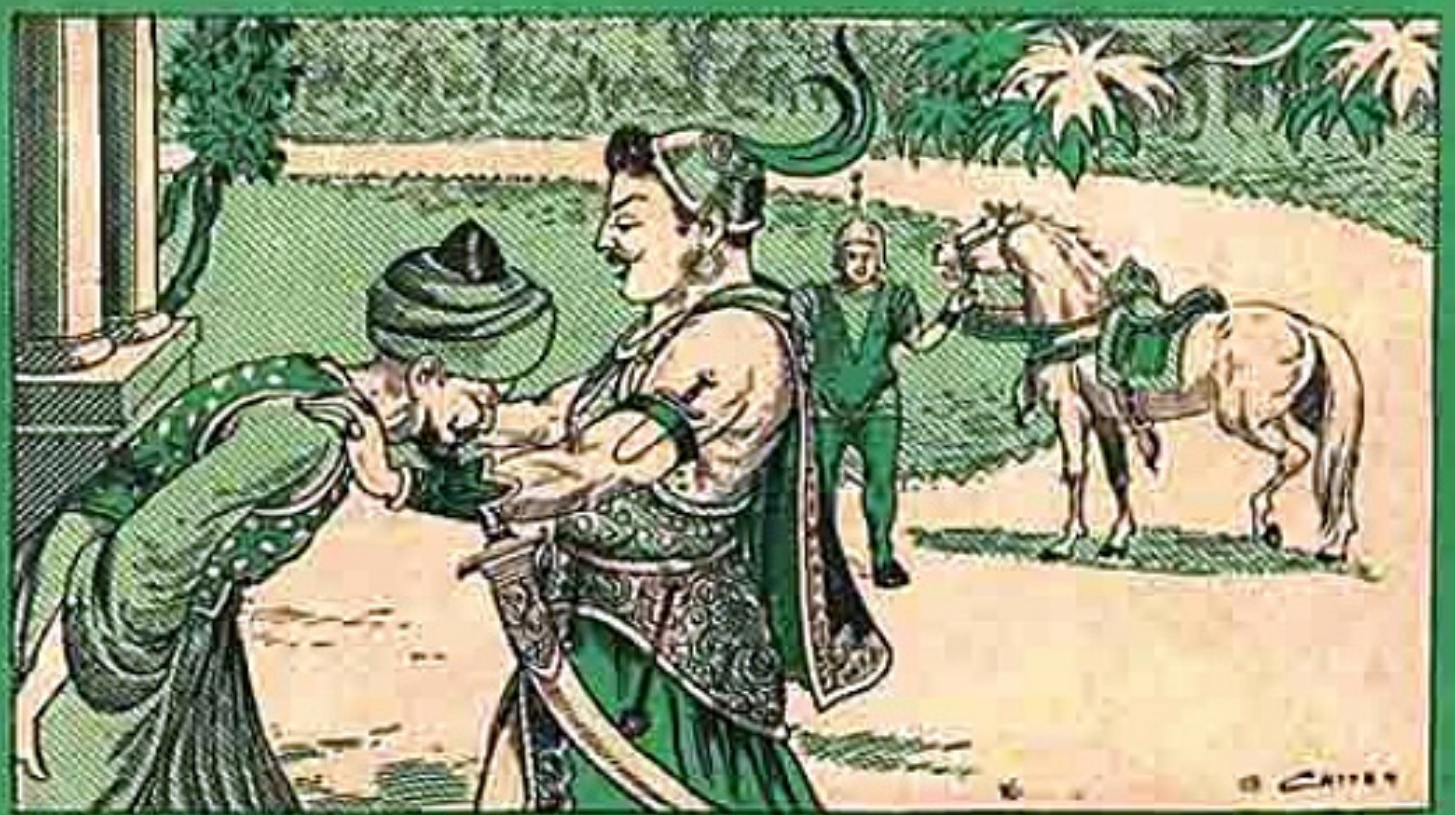
तब मन्त्री ने मुझे बुलवाया। मुझसे अपने घोड़े के लिए भी एक ज़ीन तैयार करवाई। बाद में, उस देश के बड़े बड़े लोगों ने मुझसे ज़ीन बनवाई और मुझे बहुत-सा धन दिया। मैं उस देश में सब से अधिक धनी हो गया।

राजा से मेरी ख़ासी दोस्ती हो गई। बातों के सिलसिले में उन्होंने एक बार मुझ से कहा—"देखो सिन्दबाद! तुम मेरे विश्वासपात्रों में सब से अधिक विश्वासपात्र हो। मुझे यह भी नहीं लगता कि तुम परदेशी हो। क्या तुम मेरी एक इच्छा पूरी कर सकोगे?"

"आप कहें और मैं न करूँ—यह कभी हो सकता है! कहिये।"—मैंने कहा।

"तो तुम्हें एक सुन्दर स्त्री से शादी करनी होगी। वह अच्छे घराने की है। पैसा भी बहुत है। उसको विवाह करने से, मुझे उम्मीद है कि तुम हमेशा के लिए यहीं रह जाओगे। देखो, न न करना, सिन्दबाद।"—राजा ने कहा।

मेरी समझ में नहीं आया कि मैं क्या कहूँ? ऐसा लगा जैसी मेरी अक़्ल मारी गई हो। मैं उनकी ओर न देख सका। मैंने सिर नीचा कर लिया।

"कहते क्यों नहीं हो?"–राजा ने पूछा।

"महाराज! मैं आपका सेवक हूँ। आप अपनी इच्छानुसार कीजिये।"—मैंने कहा।

तुरत उन्होंने दुल्हिन को बुलाया और काजी से मेरा विवाह कराया। वह ख़ूबसूरत ही नहीं, बड़ी रईस भी थी। उसके कई महल, जमीन-जायदाद, गाड़ियाँ वगैरह थीं। राजा ने हमारे लिए एक बढ़िया मकान, दासियाँ, नौकर-चाकर, स्त्री-मर्द गुलाम दिये।

[अभी और है]

पुत्र - वात्सल्य

किसी ज़माने में, पाटलीपुत्र का राजा शूरवर्मा था। वह बड़ा निर्दय था। जितनी बहादुरी वह युद्ध-स्थल में दिखाता उतनी ही क्रूरता वह क़ैदियों से बरतता। उसके शासन में, अपराधियों को मरण-दण्ड दिया जाता था। मरण-दण्ड फाँसी देकर अथवा सिर कटवाकर नहीं दिया जाता था; बल्कि दण्डित व्यक्तियों को शेर, चीते आदि से लड़वाया जाता और इस तरह उन्हें मरवा कर राजा अपना मनोरंजन करता।

यद्यपि वह इतना क्रूर था, तो भी वह अपने लड़के से बहुत प्रेम करता था। उसके एक ही लड़का था। उसका नाम था चन्द्रवर्मा। पिता जितना निर्दय था, उतना ही वह सहृदय था। अगर किसी को कष्ट होता तो, वह देख नहीं पाता। उसका एक बड़ा मित्र था, जिसका नाम सुबुद्धि था। दोनों की उम्र एक ही थी। देखने में वे दोनों एक जैसे थे, जुड़वे-से लगते थे। हमेशा वे दोनों साथ रहते।

चन्द्रवर्मा और सुबुद्धि ने एक ही गुरु के पास शिक्षा पाई थी और अस्त्र-विद्या भी एक साथ सीखी थी। जब वे बीस वर्ष के थे, तब शूरवर्मा ने जयन्त देश पर आक्रमण किया। और वह अपनी सेनाओं के साथ, अपने लड़के चन्द्रवर्मा और उसके मित्र सुबुद्धि को भी ले गया। पहिली बार युद्ध में चन्द्रवर्मा भाग ले रहा था।

युद्ध जल्दी ही ख़तम हो गया। जयन्त देश का राजा रणजीत युद्ध में हार गया। अपना क़िला और साथियों को छोड़कर वह जंगलों में जा छुपा। उसके ठिकाने के बारे में बहुत कम लोग जानते थे।

श्री सिद्धनाथ

ज्यों ही शूरवर्मा क़िले में घुसा, त्यों ही महाराजा रणजीत की लड़की ऊर्मिला आँसू बहाती हुई दिखाई दी। ऊर्मिला असाधारण सुन्दरी थी। जयन्त देश के राजा के वह इकलौती लड़की थी। उसको देखते ही शूरवर्मा ने उससे विवाह करना चाहा। जिस राज्य के लिए उसने इतना बड़ा युद्ध किया था, उस राज्य की अपेक्षा उसे वह कन्या अधिक महत्वपूर्ण लगी।

ऊर्मिला को देखते ही चन्द्रवर्मा भी उससे प्यार करने लगा। उसको रोता देख उसका हृदय पिघल-सा उठा। जयन्त देश को पराजित करने में क्योंकि उसने भी भाग लिया था, इसलिए ऊर्मिला की हालत पर वह पछता रहा था। वह जानता था कि उसका पिता शत्रुओं के प्रति बड़ा क्रूर था। वह डरने लगा कि कहीं ऐसा न हो कि उसका पिता, ऊर्मिला और उसके पिता को शेरों के सामने डाल दे।

वह मौका पाकर ऊर्मिला के कमरे में गया। उसने उससे कहा—"पराजय पर दुःखी न हो। तुम्हें रोता देख, मुझे बड़ा कष्ट हो रहा है। अगर मैं युद्ध भूमि में घायल होकर अपना खून बहाता तब भी मैं इतना दुःखी न होता। मेरे पिता मेरी बात नहीं ठुकरायेंगे। मैं उनसे कहकर, ऐसी संधि करवा दूँगा, जो तुम्हारे योग्य हो, और हमारे भी योग्य हो।"

पहिले तो चन्द्रवर्मा की बातों पर ऊर्मिला को विश्वास न हुआ, क्योंकि उसके पिता के शत्रुओं में वह भी एक था। परन्तु उसकी बातों को ग़ौर से सुनने के बाद वह प्रभावित हुई। वह उस पर धीमे धीमे भरोसा भी करने लगी।

शूरवर्मा यह न जान सका कि उसकी तरह उसका पुत्र भी ऊर्मिला से प्रेम कर

रहा था। परन्तु उसे इतना जरूर सन्देह हुआ कि ऊर्मिला चन्द्रवर्मा से मेल-मिलाप करके, अपने पिता की मदद करना चाहती थी। उसने तुरत अपने लड़के को बुलाकर कहा—"बेटा! रणजीत भाग गया है। सन्धि-समझौता करने के लिए कोई नहीं है। रणजीत की खोज करवा रहा हूँ। यहाँ के मामले इतनी जल्दी खतम होनेवाले नहीं हैं। तुम इस बीच अपनी छावनी में जाओ और वहाँ का काम-काज देखो। जब सन्धि का समय आयेगा, तब मैं तुम्हें यहाँ बुला भेजूँगा।"

ऊर्मिला को छोड़कर चन्द्रवर्मा जाना नहीं चाहता था। पर आज्ञा की अवहेलना भी न कर सकता था। उसको कुछ नहीं सूझा कि क्या किया जाय! उसने अपने मित्र सुबुद्धि से मिलकर कहा—"अरे भाई! ऊर्मिला की रक्षा हर तरह से करना। हमारे सिवाय उसका कोई नहीं है। तुम जानते ही हो कि पिता जी का हृदय पत्थर जैसा है। इसलिए रोज की खबर रोज मुझे पहुँचाते रहो। भूलना नहीं। और देखो, ऊर्मिला को किसी भी हालत में, किसी प्रकार की तकलीफ़ न हो।" यह कहकर वह अपनी छावनी में चला गया।

अपने लड़के के जाते ही शूरवर्मा ने ऊर्मिला के पास जाकर कहा—"तुम मुझे हमला करनेवाले के रूप में न देखो। मैं तुम्हारे वंश या राज्य का कोई अपकार नहीं करना चाहता हूँ। एक शर्त पर मैं तुम्हारे पिता से सन्धि करने के लिए तैयार हूँ। शर्त यह है कि तुम्हें मुझ से शादी करनी होगी। इस बारे में, तुम अपने पिता को खबर भेज सकती हो, पर याद रखना, यह काम बहुत जल्दी हो जाना चाहिए।"

इसके बाद, शूरवर्मा ने अपने सैनिकों को आज्ञा दी कि राजकुमारी को वे क़ैदी न समझें और उसको क़िले में इच्छानुसार घूमने-फिरने दें। परन्तु उसने अपने दो विश्वस्त सैनिकों को बुलाकर कहा—"यह मालूम करो कि ऊर्मिला से कौन कौन बातें करते हैं! इसकी ख़बर मुझे फ़ौरन देते रहना।"

शूरवर्मा के कहने के अनुसार, ऊर्मिला ने उसकी इच्छा के बारे में, मन्त्री द्वारा अपने पिता को कहला भेजा। फिर उसने सुबुद्धि को बुलवाया। सुबुद्धि को ऊर्मिला के कमरे में जाता देख, उन भेदिये सैनिकों ने राजा के पास ख़बर पहुँचाई। तुरंत शूरवर्मा ने आज्ञा दी कि हाथ-पैर बाँधकर सुबुद्धि को जेल में डाल दिया जाय।

इस बीच में सुबुद्धि ने पता लगा लिया कि शूरवर्मा ऊर्मिला से विवाह करना चाहता है और ऊर्मिला चन्द्रवर्मा से विवाह करना चाहती है। उसने ऊर्मिला को वचन दिया कि कुछ भी हो, यह बात, जैसे तैसे चन्द्रवर्मा तक पहुँचा देगा। परन्तु इतने में सैनिक उसको पकड़कर ले गये और उसको क़ैद में डाल दिया। सुबुद्धि भौंचक्का रह गया। उसे कुछ नहीं सूझा।

मन्त्री की खबर मिलते ही, जंगलों में छुपा राजा रणजीत, गुप्त-मार्ग से किले में आया। शूरवर्मा से ऊर्मिला की शादी के विषय में उसके पिता को कोई आपत्ति न थी। सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए और विवाह को धूम-धाम से मनाने के लिए एक अच्छा दिन निश्चित किया गया।

छावनी में चन्द्रवर्मा को सुबुद्धि से कोई भी खबर न मिली। वह घबराने लगा। इसके अलावा सैनिकों में कई अफ़वाहें उड़ने लगीं। वे कह रहे थे कि महाराजा रणजीत वापिस आ गये थे, जल्दी ही सन्धि होनेवाली थी और वे सब वापिस पाटलीपुत्र आ सकेंगे।

एक दिन रात को मामूली कपड़े पहिन कर चन्द्रवर्मा किले की ओर निकला। राह चलते आदमियों से उसे पता चला कि कल ही उसका पिता ऊर्मिला से विवाह करनेवाला है और सुबुद्धि को देशद्रोह के अपराध पर क़ैद में डाल दिया गया है। क़िले में घुसकर वह सीधा जेल में गया। वहाँ उसने पहरेदारों से कहा कि वह शूरवर्मा का लड़का था। उसने उन्हें सुबुद्धि के पास ले जाने के लिए कहा।

चन्द्रवर्मा ने सुबुद्धि को बुलाया। सुबुद्धि ने बिना सिर उठाये कहा—"कौन हो तुम? तुमसे मेरा कोई काम नहीं है, जाओ यहाँ से।"

चन्द्रवर्मा ने पहरेदार को जाने के लिये कहा। और स्वयं दरवाज़ा खोलकर, सुबुद्धि की कोठरी में वह गया। उसने सुबुद्धि के पास आकर कहा—"सुबुद्धि! देखो मैं चन्द्रवर्मा हूँ।"

सुबुद्धि ने खड़े होकर चन्द्रवर्मा का आलिंगन किया।

"आपके पिता कल उसे शेरों के सामने फिकवा देंगे। उससे इस समय मिलना अच्छा नहीं है।"—पहरेदारों ने कहा।

चन्द्रवर्मा यह सुनकर काँप गया।

"इसलिए ही उससे आज एक बात मालूम करनी है। मुझे तुरन्त उसके पास ले जाओ।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

एक पहरेदार, चन्द्रवर्मा को सुबुद्धि के पास ले गया। सुबुद्धि जगा ही हुआ था। वह घुटनों पर सिर धर दीवार के सहारे कुछ सोचता हुआ सिकुड़ा बैठा था।

"जल्दी करो। हम अपने कपड़े बदल लें। तुम्हारी जगह मैं क़ैद में रहूँगा। मेरे कपड़े पहिन कर तुम फ़ौरन यहाँ से चले जाओ।"—चन्द्रवर्मा ने कहा।

"नहीं, यह सम्भव नहीं है। कल मुझे शेरों के सामने फेंक दिया जायेगा।"—सुबुद्धि ने कहा।

"तुम्हारी इस हालत का मैं ही कारण हूँ। मेरे कारण तुम्हें क्यों मरना चाहिये? मेरी बात मान जाओ। जल्दी मेरे कपड़े पहिन लो।"—चन्द्रवर्मा ने कहा।

पर सुबुद्धि न माना। आखिर चन्द्रवर्मा ने राजा होने के नाते आज्ञा दी। सुबुद्धि

को आज्ञा का पालन करना पड़ा। चन्द्रवर्मा कपड़े बदलकर उसकी तरह दीवार से सटकर बैठ गया। और सुबुद्धि बाहर चला गया। पहरेदार ने बाहर जाते हुए सुबुद्धि को देखा। पर उसे कोई संदेह न हुआ। वह ताला लगाकर चला गया।

अगले दिन शूरवर्मा का विवाह था। विवाह के पूर्व मनोरंजन का प्रबन्ध किया गया था। क़ैदी और शेर का युद्ध इस मनोरंजन के कार्यक्रम में शामिल था। इसके लिए एक खास घेरे का प्रबन्ध किया गया। उसमें शेर को छोड़ दिया गया। इसे देखने के लिए महाराजा रणजीत, उसकी पुत्री ऊर्मिला, दोनों देशों के उच्च अधिकारी बैठे हुए थे। घेरे के चारों ओर मामूली लोग बैठे थे।

चन्द्रवर्मा को क़ैद से लाया गया और शेर से लड़ने को कहा गया। उसे एक तलवार और ढाल दी गयी। उसके बाल बिखरे हुए थे। क़ैदी की पोशाक में उसे कोई भी चन्द्रवर्मा न कह सकता था। शूरवर्मा भी उसे सुबुद्धि समझ रहा था।

शेर ने पहिले चन्द्रवर्मा की ओर देखा, फिर उसने मुँह फेर लिया। उसको डराकर उकसाने के लिए, शूरवर्मा खड़ा होकर बिगुल बजाने लगा। उस शोर के कारण शेर चन्द्रवर्मा पर कूदा। वह ढाल को सामने करके एक तरफ़ कूदा; पर तलवार लेकर शेर तक न पहुँच सका। इससे शेर का गुस्सा और बढ़ गया.... खूब गरजते हुए फिर शेर ने उस पर पंजा मारा। इस बार उसके पैरों पर तलवार का वार लगा।

इस भयंकर युद्ध को ऊर्मिला देवी न देख सकी। उसने आँखों पर हाथ रख लिये। शूरवर्मा के सिवाय यह युद्ध किसी

को अच्छा नहीं लग रहा था। क़ैदी का शेर के साथ अक़्लमन्दी के साथ लड़ना, वह ग़ौर से देखता रहा। पर वह इस फ़िक्र में था कि शेर कब क़ैदी को जीतता है।

ठीक इसी समय सुबुद्धि वहाँ हाँफ़ता हाँफ़ता भागा भागा आया। "महाराज! चन्द्रवर्मा को बचाइये! वह शेर उसे मार देगा।"—वह चिल्लाया।

शूरवर्मा ने सुबुद्धि को पहिचाना। "तो यानी सुबुद्धि उस शेर से नहीं लड़ रहा था!" राजा पागल-सा हो गया। "मेरा बेटा....शेर मार रहा है, बचाओ।"—शूरवर्मा चिल्लाने लगा।

यह जानते ही कि चन्द्रवर्मा शेर के साथ लड़ रहा है, ऊर्मिला कटे हुए केले के पेड़ के समान गिर पड़ी।

दर्शकों में होहल्ला मचा। शेर भी शोर सुनकर डर गया। चन्द्रवर्मा इसी मौके की तलाश में था, उसने झट शेर के पेट में तलवार मार दी। शेर छटपटाता मर गया।

शूरवर्मा में बड़ा परिवर्तन आगया। वह अपने पुत्र को गले लगाकर, स्त्री की तरह रोने लगा। कितनों ही के शेर द्वारा मारे जाने पर वह खुश हुआ था। पर वह यह कभी न भूल सका कि शेर को पुत्र पर हमला करता देख वह खुश हुआ था। उसने फिर कभी किसी से युद्ध न किया और न किसी के साथ निर्दयता का व्यवहार ही किया। वह बिल्कुल बदल गया और अपने पिछले दिनों को याद कर पछताता रहा।

चन्द्रवर्मा और ऊर्मिला का यथारीति विवाह हुआ। उसने पाटलीपुत्र और जयन्ती देश का राजा बनकर, बहुत दिनों तक राज्य किया।

एक बढ़ई था, एक जुलाहा
थी दोनों में गहरी प्रीत,
मेला एक लगा था भारी
गये साथ दोनों वे मीत।

एक जगह गिर पड़ा अचानक
किंतु जुलाहा हो बेहोश,
यत्न मित्र के करने पर ही
आखिर उसको आया होश।

पूछा उससे बढ़ई मित्र ने
कहो मुझे सच क्या है बात,
गिरे अचानक कैसे भू पर
शिथिल तुम्हारा क्यों है गात?

आहें भरते दुखी जुलाहे
के मुख से निकले ये बोल—
"मित्र, बताता मैं हूँ तुमको
सारी ही बातें अब खोल!

हथिनी पर चढ़ राजकुमारी
गयी अभी ही जो है आह,
धधक रही है याद उसकी
बनकर उर में भीषण दाह।"

कहा बढ़ई ने—"नहीं करो तुम
मन में अपने चिंता लेश,
ब्याह तुम्हारा होगा उससे
सजता हूँ देखो मैं वेष!"

इतना कहकर यंत्र बनाया
एक उसीने गरुड़ाकार,
सजा मित्र को विष्णु-वेष में
किया गरुड़ पर शीघ्र सवार।

लेकर उड़ा रात में उसको
बहुत वेग से गरुड़-विमान,
पहुँच गया वह बात-बात में
अन्तःपुर में तीर समान।

बोला राजकुमारी से वह—
"विष्णु रूप मैं हूँ भगवान,
ब्याह तुम्हींसे करने आया
पति मुझको लो अपना मान!"

श्री "भारतीभक्त"

आयी हो तुम पुनः धरा पर
धर नारी का सुन्दर रूप,
तुम तो मुझको देख सकी हो
पर न योग्य उसके हैं भूप।

इसीलिए अब झिझक छोड़ दो
औ' कर लो गंधर्व-विवाह,
भस्म अन्यथा कर राजा को
साफ़ करूँगा ही मैं राह!"

यह सब सुनकर राजकुमारी
कर न सकी ज्यादा इनकार,
विष्णु-वेषधारी छलिया को
बना लिया जीवन-आधार।

रोज़ रात में मिलते दोनों
सुख से करते साथ विहार,
फिर तड़के ही गरुड़-यान पर
जाता गृह को छली सिधार।

रह न सकी पोशीदा लेकिन
अधिक दिनों तक उनकी बात,
राजा के भी पड़ी कान में
उड़ती उड़ती-सी यह बात।

फिर तो अस्थिर हुए नृपतिवर
उफ़न उठा मन का सब रोष
पर बेटी ने कहा उन्हें यह—
"नहीं ज़रा भी मेरा दोष।

आये खुद ही विष्णुदेव जब
करने को गंधर्व-विवाह,

सकुचाई-सी राजकुमारी
टेक धरा पर अपना शीश,
बोली—"मैं तो तुच्छ जीव हूँ
आप जगत के पालक ईश।

ब्याह हमारा कैसे होगा
यही रही मैं मन में सोच
कह दें आप पिताजी से यदि
तो न मुझे होगा संकोच।"

कहा जुलाहे ने तब उससे—
"पूर्व-जन्म का सुनो वृतान्त,
तुम राधा थी और तुम्हारा
था मैं ही वह मोहन कान्त।

कर सकती थी आखिर क्या
और बची थी ही क्या राह?"

बेटी की बातें सुन राजा
हुए सोच यह बरबस मौन,
आज रात में देखें खुद ही
रोज भला आता है कौन!

रात हुई जब, छिपकर बैठे
राजा-रानी दोनों साथ,
गरुड़-यान को देख उन्होंने
झुका लिये श्रद्धा से माथ।

शंका जाती रही मिनट में
बैठ गयी दिल में यह बात,
बने जामाता सच मुच उनके
विष्णुदेव ही हैं साक्षात!

फिर तो राजा अहंकार के
मद में हुए बहुत ही चूर,
आसपास के राजाओं को
लगे छेड़ करने मज़बूर।

आखिर सभी पड़ोसी राजा
चढ़ आये सेनाएँ साज,
तब जा बोला वह बेटी से—
"रखनी तुमको ही है लाज।

कहो यही तुम अपने पति से
करें शत्रुदल का वे नाश,
अगर देर इसमें होगी तो
होगा निश्चय सब कुछ नाश।"

अस्तु, रात में जब वह फिर से
चढ़कर आया गरुड़-विमान,
हाथ जोड़ तब राजकुमारी
बोली—"स्वामी, कृपानिधान!

पिता आज हैं पड़े विपद में
औ' खतरे में उनका प्राण,
सिवा आपके कौन करेगा
इस संकट से उनका त्राण?"

राजकुमारी की बातों को
सुना जुलाहे ने दे कान,
शीश हिलाया फिर झट उसने
जैसे हो सचमुच भगवान।

आकाश-वाणी

विक्रमार्क अपने हठ का पक्का था। पेड़ के पास वह फिर गया। शव को उतारकर, कन्धे पर डाल श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने हँसकर कहा—"राजा! तुम इतनी मेहनत कर रहे हो, पर जो होना है, उसको रोकने की तुम में क़तई ताक़त नहीं है। बहुत पहिले, कुणाल नाम का युवक, इसी अज्ञान में अपनी जान खो बैठा। उसकी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यह कहानी सुनाई:

किसी ज़माने में, एक गाँव में कुणाल नाम का एक नौजवान रहा करता था। वह बड़ा दयालु था। हमेशा खुश रहता। वह नौकरी के लिए एक दिन अपना गाँव छोड़कर राजधानी की ओर निकला।

वेताल कथाएँ

गाँव के पश्चिम में, कुछ दूर जाने पर एक जंगल पड़ता था। उसके बाद झाड़-झंखाड़ आते थे। पहाड़ की पश्चिम की ओर राजधानी थी।

कुणाल जब जंगल में पहुँचा तो दुपहर हो गई थी। जंगल में छाँह थी। वह गाता गाता, उछलता-कूदता जंगल में घुसा।

उसी समय एक गम्भीर आवाज़ आई: "कुणाल! जंगल में मत घुसो! तुम क़त्ल कर सकते हो।" वह यह न जान सका कि यह शब्द कहाँ से आया था और कितनी दूर से आया था। पहिले यह सोचकर कि उससे कोई मज़ाक कर रहा था, उसने पेड़ के पीछे देखा। वहाँ उसे कोई नहीं दिखाई दिया।

वह आगे जाना चाहता था, इसलिए उसने उस आवाज़ की परवाह न की। वह जंगल में घुस कर, पेड़ों की छाँह में चलने लगा। वह नरम स्वभाव का था। कहीं वह किसी को क़त्ल न कर बैठे, वह इस सोच-विचार में पड़ गया। वह इधर उधर देखता जा रहा था। परन्तु जंगल में उसे कोई न दिखाई दिया। कोई घटना नहीं घटी और वह जंगल के पार चला गया।

तब भी धूप काफ़ी तेज़ थी। बिना किसी वजह के डरने के कारण, कुणाल मन ही मन हँसा और जंगल के आख़िर पेड़ के नीचे कुछ देर सोया। मुँह पर धूप पड़ने पर वह उठा। झाड़-झंखाड़ों को पार कर, पहाड़ पर चढ़ना और उतरना था। इसलिये वह जंगल से आगे बढ़ा।

फिर पहिले की तरह आवाज़ आई: "कुणाल! आगे मत जाओ; तुम्हारे कारण देश पर विपत्ति आ सकती है।"

"तुम कौन हो? इस तरह मुझे क्यों डरा रहे हो? मुझे तुम्हारी बात पर

अब वह पहाड़ के पास गया तो अंधेरा शुरू हो गया था। पर वह जानता था कि पहाड़ के परली तरफ़ अभी थोड़ी देर और रोशनी रहेगी। इसलिये वह पहाड़ पर चढ़ने लगा। फिर वही आवाज़ सुनाई दी:

"कुणाल! पहाड़ पर मत चढ़ो। मर सकते हो।"

कुणाल खौल उठा। "मुझे क्यों इस तरह डरा रहे हो! तुमने क्या मुझे मज़ाक समझ रखा है! झाड़-झँखाड़ पार कर गया; पर क्या देश पर कोई आपत्ति आई!"—वह चिल्लाया।

"हाँ! तुमने झाड़-झँखाड़ों को पार करते समय कई तितलियों को उड़ा दिया। उसमें से एक तो बहुत ही डर गई। वह राजधानी में जाकर वहाँ एक पेड़ पर अंडे देगी। उनमें से निकलनेवाले कीड़ों में से एक गर्भवती रानी के पास महल में जाएगा। उसको देख कर रानी चिल्लाकर गिर जायेगी। उसका गर्भ भी गिर जायेगा। राजा के फिर सन्तान न होगी। इसलिये राजा का भाई राजा बनेगा। वह बड़ा दुष्ट है। उसके कारण राज्य में अराजकता फैलेगी। और आखिर वह राज्य को

विश्वास नहीं है। जंगल में घुसते ही तुमने कहा कि मैं किसी को क़त्ल कर दूँगा। पर मैंने किसी को क़त्ल नहीं किया।" कुणाल ने कहा।

"क़त्ल किया है, तुम्हारे पैरों के नीचे कुचलकर एक कीड़ा मर गया है।"—उस आवाज़ ने कहा।

"तो मैं क्या कर सकता हूँ! ऐसी ग़लती हर कोई करता है। इन झाड़ों के पास आने के कारण, देश पर विपत्ति आयेगी, यह सरासर सफ़ेद झूट है।" कहते हुए कुणाल आगे बढ़ गया।

शत्रुओं के हाथ में सौंप देगा। और इस सब का कारण तुम ही हो।"

"हर कार्य का कोई न कोई परिणाम होता है न! कभी गुज़रनेवाली घटना का मैं कैसे ज़िम्मेवार ठहराया जा सकता हूँ! यह मैं न मानूँगा।" कहता हुआ कुणाल पहाड़ पर चढ़ने लगा। जब वह पहाड़ की चोटी पर पहुँचा तो सूर्य डूब रहा था।

कुणाल ने खुश होकर, गर्व के साथ कहा—"अब क्या कहते हो! मैं पहाड़ पर चढ़ गया हूँ; पर अभी जिन्दा हूँ। तुम्हारी बातें झूट हैं।"

"अरे पागल! तुम से झूट कहने की मुझे क्या पड़ी है! जब पहाड़ पर चढ़े हो तो उतरोगे ही। तुम जिन्दा किसी को न देख सकोगे और तुम्हें कोई जिन्दा न देख सकेगा। समझे!" उस आवाज़ ने कहा।

कुणाल डर गया। अंधेरे में उसके लिए पहाड़ से उतरना मुश्किल हो गया। कुछ देर उसने सोचा कि सवेरा होने तक वहाँ ठहरना ही अच्छा था। फिर उसने सोचा कि डरना बेकार था। क्योंकि अगर वह आकाश-वाणी ही है तो भविष्य के बारे में जानकर ही सावधान करेगी। उस हालत में वह मरेगा ही। और जब मरना हो तो सवेरे तक उसकी प्रतीक्षा करने की कोई जरूरत नहीं है। अगर आकाश-वाणी बिना भविष्य के ज्ञान के होती तो उसके पालन करने की जरूरत ही नहीं है।
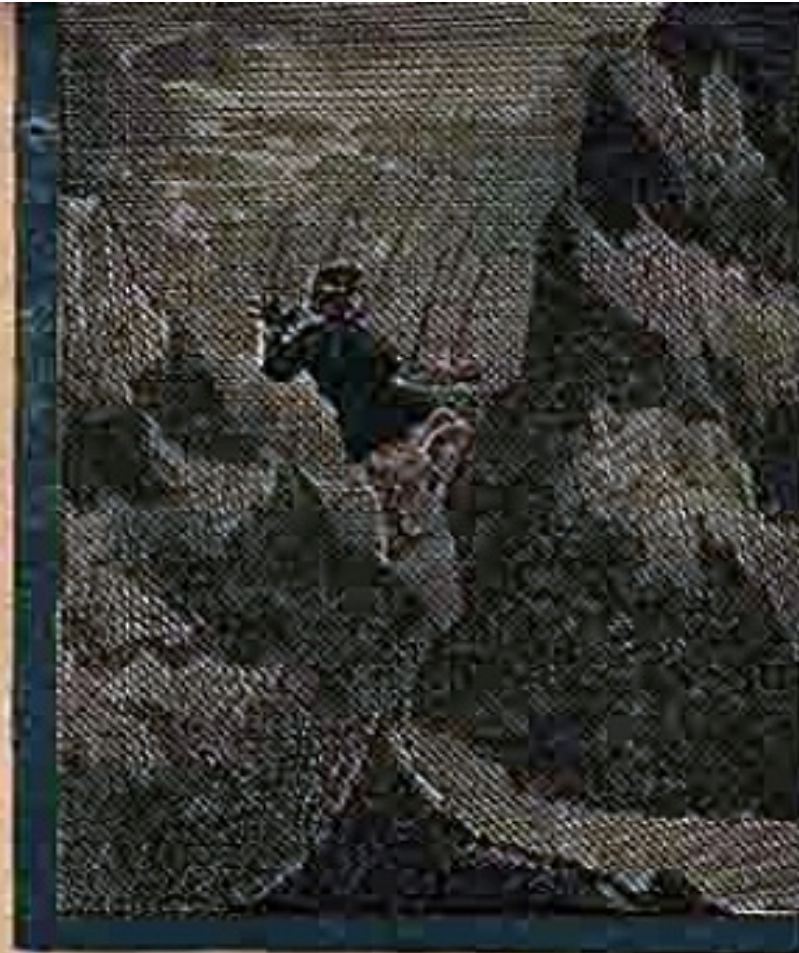
यह सोच कुणाल आगे बढ़ा। पर एक जगह अंधेरे में उसका पैर फिसल गया। और वह नीचे गिरकर मर गया। आकाश-वाणी के अनुसार एक कीड़ा रानी के पास गया और वह मूर्छित हो गई। रानी का गर्भ भी गिर गया। राजा के सन्तान न हुई। राजा का भाई राजा बन गया। उसके

समय में राज्य में अराजकता फैली और फिर वह शत्रु के हाथ में चला गया।

वेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा! मुझे एक सन्देह है। आकाश-वाणी की बातों का पालन न करके कुणाल ने ग़ल्ती की कि नहीं? उसको हत्या करने का पाप, राज्य को विपत्ति में डालने का पाप, आत्म-हत्या का पाप लगेगा कि नहीं? तुमने इन प्रश्नों का जान-बूझकर जवाब न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

"कुणाल ने ग़ल्ती नहीं की। उसे कोई भी पाप न लगेगा। आकाश-वाणी भविष्य को जान सकती है, पर उसको बदल नहीं सकती। अगर बदल सकती तो वह सावधान ही न करती, बल्कि भविष्य के बारे में बताती भी। अगर कुणाल को पहिले मालूम होता कि उसके जंगल में जाने से एक कीड़ा मर जायेगा तो वह शायद जंगल में घुसता ही नहीं। वापिस चला जाता। परन्तु कुणाल के जंगल में घुसने से, झाड़-झंखाड़ पार करने से, पहाड़ पर चढ़ने से रोकने की शक्ति उस आकाश-वाणी में न थी। यह बात साफ़ है।"

"आख़िर कुणाल मनुष्य ही तो था। इसलिए वह राह में कीड़े को बिना मारे रह सकता था, या राज्य को विपत्ति में डाले बगैर रह सकता था, या स्वयं मरे बगैर रह सकता था, यह कौन कह सकता है? आकाश वाणी की तरह वह भविष्य भी न जानता था। इसलिए कुणाल सर्वथा निर्दोषी है।"—विक्रमार्क ने जवाब दिया।

राजा का इस प्रकार मौन-भंग होते ही वेताल शव के साथ फिर पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)

[४]

[भुवन-सुन्दरी को वापिस ले जाने के उद्देश्य से प्रताप ने ग्रीक राजाओं को एकत्रित किया। वह ट्रोय पर हमला करने के लिए निकला। पर कामयाबी हासिल न हुई। वे ट्रोय पहुँचने के बदले मिसिया पहुँचे। फिर वहाँ से ट्रोय के लिए रवाना हुए तो समुद्र में बड़ा तूफ़ान चला। आख़िर उन्हें ग्रीस लौटना पड़ा। एक साल बाद प्रताप ने ट्रोय पर धावा बोल दिया....]

अगर ग्रीक नौकाओं से उतरनेवालों में चन्द्रप्रभु पहिला था तो वज्रकाय दूसरा। उसके बाद ग्रीक सेनायें जहाज़ों से जल्दी जल्दी उतरकर बड़े उत्साह से युद्ध करने लग गयीं।

ट्रोजनों में, मराल नाम का एक वीर था। उसे तलवार या भाले से नहीं मारा जा सकता था। इसी मराल ने पहिले दिन युद्ध में कई ग्रीक सैनिकों को यम के पास भेज दिया था। वज्रकाय मराल का मुक़ाबला करने लगा। बहुत देर युद्ध चला, पर मराल न झुका। आख़िर, जब मराल पत्थर से टकरा कर ज़मीन पर गिर गया तो वज्रकाय यह मौका पाकर उसकी छाती पर जा कूदा और उसका गला घोंट कर उसने उसे मार दिया।

मराल के मरते ही ट्रोजन सेनायें तितर बितर हो गईं, और ट्रोय नगर की ओर भाग गईं। वे निरुत्साह और निराश हो गये। तब ग्रीकों ने अपने जहाज़ों

[एक ग्रीक पुराण कथा]

को एक सुरक्षित स्थान पर रख, ट्रॉय नगर की चार-दीवारी के बाहर घेरा डाल दिया। यह घेरा दस वर्ष तक ज़ारी रहा, नौ वर्षों में, दोनों पक्षों में कोई खास युद्ध न हुआ, पर कई विशेष घटनाएँ घटीं।

ट्रॉय नगर के राजा वर्धन की दो पत्नियाँ थीं। मोहन की माँ, उसकी दूसरी पत्नी थी। उसके पचास लड़कों में, १९ लड़के उसी के थे। उन सब में बड़ा वीरसिंह था। उसके एक और लड़के का नाम था इल्यु। जब इल्यु का जन्म हुआ था तो उसके बारे में ज्योतिषियों ने कहा था कि अगर वह बीस वर्ष का हो गया तो कोई भी ट्रॉय नगर को न जीत सकेगा।

इसलिये जैसे भी हो, वज्रकाय इल्यु का काम तमाम करने की फ़िक्र में था। एक दिन, मन्दिर के प्रांगण में, इल्यु अपने नौकरों से घोड़ों को कवायत करवा रहा था। वज्रकाय अचानक वहाँ गया, और इल्यु को देखकर उसने उसको भाले से मार दिया। उसकी मृत्यु पर सारे ट्रॉय नगर वासी बहुत दुःखी हुए।

वर्धन के लड़कों में वृकाक्ष नाम का एक और लड़का था। जब वह बाग में, रथ

बनाने के लिए लकड़ी काट रहा था रात में, छुपा छुपा वज्रकाय उस बाग में गया। उसको पकड़कर, अपनी सेना के पास ले गया। उस कैदी को ग्रीक सरदारों ने, ग्रीक सेना को शराब बेचने वाले एक राजा को गुलाम के रूप में बेच दिया। उस राजा के किसी कर्मचारी ने, वृकाक्ष की हालत पर तरस खायी और राजा को काफ़ी धन देकर उसे स्वतन्त्र कर दिया। जब वह खुशी खुशी तरह तरह की कल्पनाएँ करता हुआ ट्रोय नगर वापिस जा रहा था तो वज्रकाय ने उसको रास्ते में देखकर उसे मार दिया।

वज्रकाय ने इस तरह के और भी कई कारनामे किये। युद्ध नहीं था, इसलिये ग्रीक सैनिकों को कुछ काम काज भी न था। जो जी में आता था करते थे। वज्रकाय सैनिकों की एक टोली लेकर ट्रोय नगर के आसपास के प्रदेश का निरीक्षण करने लगा। जब वे घूमते-घामते, हँसते-हँसाते इडा पर्वत पर पहुँचे तो उन्हें प्रशंस नाम का एक व्यक्ति दिखाई दिया।

यह प्रशंस मोहन का सम्बन्धी था। मोहन जब भुवन-सुन्दरी को लाने के लिये गया था तब वह भी उसके साथ गया था।

उसने उसकी कई प्रकार से सहायता की थी तो भी, भुवन-सुन्दरी को लेकर ग्रीक और ट्रोजनों में जो युद्ध हो रहा था, उसमें वह तटस्थ ही रह गया था। उसने ऐसा करने में ही अपनी भलाई समझी। उसकी सेना ने भी युद्ध में हिस्सा न लिया।

प्रशंस, जब अपने पशु-पालकों के साथ इडा पर्वत पर था, तब वज्रकाय और उसके सैनिक वहाँ आये और उन पर हमला करने लगे। वज्रकाय के हमले का मुकाबला प्रशंस न कर सका और वह पहाड़ से उतरकर चला गया। ग्रीकों ने बड़ी मनमानी की, और पशु-पालकों को मारकर उनके पशुओं को ले लिया।

इस घटना के बाद, प्रशंस तटस्थ न रह सका। तुरन्त वह अपनी सेनाओं को ट्रोय नगर ले गया और युद्ध में शामिल हो गया। प्रशंस बड़ा बहादुर योद्धा था। वज्रकाय भी जो किसी की परवाह न करता था, उसके बारे में कभी बेअदबी से नहीं बात करता था। ट्रोजन सैनिकों के बारे में तो कहने की ही ज़रूरत नहीं। वे जितना वीरसिंह का आदर करते थे, उतना ही प्रशंस का भी आदर करते। वह युद्ध में बड़ी बहादुरी दिखाता। कई बार घायल हुआ, पर ज़िन्दा ही रहा।

इस युद्ध में प्रशंस की मृत्यु नहीं बदी थी। उसके बारे में यह कहा गया था, कि उसके वंश वाले, भविष्य में, ट्रोय नगर के राजा होंगे।

ट्रोय नगर से मैत्री रखनेवाले कई और नगर भी थे। उनमें से कई को ; वज्रकाय ने हरा दिया था और अपने कब्जे में भी कर लिया था। उनमें से एक राजा वह भी था, जिसने अपनी पुत्री का विवाह, वीरसिंह के साथ किया था। ग्रीक लोगों

के साथ युद्ध करते हुए, यह राजा और उसके सात पुत्र मारे गये।

ग्रीक लोगों के शिविर में कई बातें हुईं। उनमें से एक यह थी :

एक दिन राजा ने रूपधर को बुलाकर आज्ञा दी—"तुम थ्रेस जाकर, वहाँ से जहाजों में रसद लाओ।" रूपधर उसकी आज्ञा के अनुसार गया तो सही, पर अपने काम में उसे सफलता नहीं मिली। वह खाली हाथ वापिस चला आया।

ग्रीक वीरों में प्रबोध नाम का एक बड़ा योद्धा था उसने एक दिन रूपधर से कहा—"तू, निरा आलसी है। डरपोक है।"

"इसमें मेरी कोई ग़ल्ती नहीं है। कहीं भी हमें रसद न मिली। अगर राजा तुझे भेजता तो तू भी खाली हाथ वापिस आता"—रूपधर ने कहा।

प्रबोध को जोश आ गया। वह तुरत एक जहाज लेकर निकल गया और थोड़े ही दिनों के अन्दर उसको रसद से भरकर वापिस ले आया। इस घटना से रूपधर का बुरी तरह अपमान हुआ। वह प्रबोध से बदला लेने की सोचने लगा। सोचते-सोचते उसे एक चाल सूझी।

एक दिन, रूपधर ने राजा के पास यह खबर भेजी :

'रात को मुझे सपने में देवता दिखाई दिये। उन्होंने कहा कि एक आपत्ति आनेवाली है। ग्रीक सेना के एक दिन और रात कहीं और पड़ाव डालने से आपत्ति हट सकती है।"

रूपधर की खबर पर राजा ने तुरत कार्यवाही की। ग्रीक सेना अपने शिविर को छोड़कर, एक दिन और एक रात के लिए किसी और जगह चली गई। शिविर खाली होने पर रूपधर चुपचाप प्रबोध के तम्बू

में जाकर, एक सोने के सिक्कों की थैली रख आया। फिर उसने एक युद्ध के क़ैदी को डरा-धमका कर उससे एक चिट्ठी लिखवाई। वह पत्र इस तरह लिखा गया था कि मानो वर्धन ने प्रबोध को लिखा हो। "ग्रीकों को धोखा देने के लिए तेरी इच्छा के अनुसार, सोना भेजा जा रहा है" उस पत्र में लिखा था।

"तुम इस पत्र को लेकर तुरत प्रबोध के पास पहुँचाओ।"—रूपधर ने कैदी को आज्ञा दी। वह क़ैदी रूपधर के कहे अनुसार जब उस चिट्ठी को प्रबोध के पास ले जा रहा था तो रास्ते में अचानक रूपधर के आदमियों ने उसे घेरकर मार दिया।

जब ग्रीक अगले दिन अपने शिविर में आये तो उन्हें बाहर मरा हुआ क़ैदी दिखाई दिया। उसके पास से एक पत्र मिला। क्योंकि वह एक ख़तरनाक पत्र था इसलिए उसको राजा के पास भेजा गया। राजा ने उस चिट्ठी को पढ़कर, प्रबोध को बुलवाया। उससे पूछा गया कि वर्धन के पास से इस प्रकार की चिट्ठी कैसे आयी थी! प्रबोध को इस पर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने कहा कि मैं देशद्रोही नहीं हूँ, न कभी मुझे वर्धन ने रुपया दिया था, न किसी और ने।

"उसके तम्बू की तलाशी करने पर सच मालूम हो जायेगा।"—रूपधर ने कहा।

तम्बू की तलाशी ली गई। सोना बरामद हुआ। प्रबोध देशद्रोही साबित हुआ। देशद्रोही के लिए दण्ड यही था कि सैनिक उस पर पत्थर फेंक-फेंककर उसे मार दें। प्रबोध को ग्रीक सैनिकों ने पत्थरों से मार दिया। मरते समय उसने कहा—"अरे सत्य, क्या तू मेरे देखते देखते ही मर गया है!"
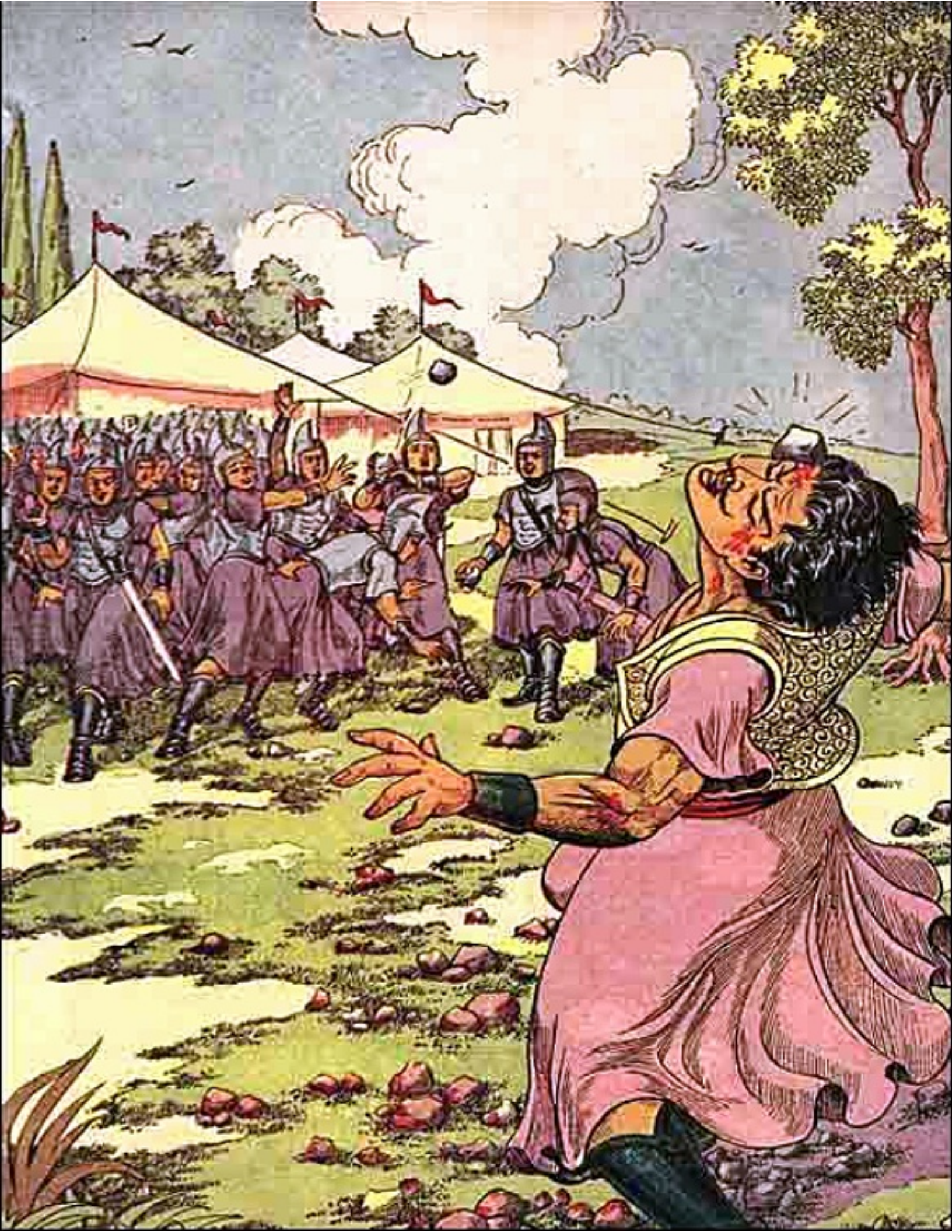
प्रबोध की हत्या हर तरह से निन्दनीय थी। वह निर्दोषी ही नहीं, बहुत प्रतिभाशाली और बहादुर भी था। ट्रोय नगर का घेरा डाले हुए, ग्रीक सेनाओं का मन बहलाने के लिए उसने शतरंज खेल का आविष्कार किया। उसने कई ऐसी चीज़ें बनाईं। उसने प्रकाशस्तम्भ बनाये। तराज़ू और बट्टे बनाये। लिपि का उसने आविष्कार किया। पहरा आदि के प्रबन्ध का विधान उसने तैयार किया। ग्रीक लोगों पर उसका कई तरह का एहसान था।

ग्रीस देश में रहनेवाले प्रबोध के पिता को, उसके पुत्र की हत्या का समाचार पहुँचा। वह बड़ा दुःखी हुआ और तुरन्त ट्रोय नगर के लिए निकला। राजा के पास जाकर उसने बड़े निर्भीक होकर साफ़ साफ़ पूछा—"मेरे पुत्र की किस कारण से हत्या की गई है! किस प्रकार सिद्ध किया गया कि वह द्रोही था!"

राजा ने उसको जवाब देने से इनकार कर दिया। राजा को शायद मालूम था कि प्रबोध निष्कारण मारा गया था। रूपधर ने उसके विरुद्ध साजिश की थी। तो भी क्योंकि रूपधर पर उसको भरोसा था इसलिए उसने प्रबोध के पिता की शिकायत को ठुकरा दिया।

जिस काम पर वह गया था, वह पूरा न हुआ। इसलिए प्रबोध का पिता वापिस ग्रीस चला गया। उसने कुछ ग्रीक सैनिकों की स्त्रियों से कहा—"तुम्हारा पति ट्रोय नगर की स्त्रियों से विवाह करके उनको साथ ला रहे हैं। अब उन्हीं की चलेगी...." वह झूठमूठ कहने लगा। यह सुन कई ग्रीक स्त्रियों ने आत्म-हत्या कर ली।

(अभी और है)

व्यर्थ पूजा

एक गाँव में एक मामूली किसान रहता था। उसका पिता बूढ़ा होकर गुज़र गया था। परन्तु किसान हमेशा पिता के लिए रोता रहता। पिता की हड्डियों को एक हंडे में रखकर उसने घर के आँगन में गड़वा दिया। उस पर समाधि बनवाई। समाधि पर रोज़ फूल डालकर उसकी पूजा करता।

उस किसान के एक लड़का था। उसको पिता की हरकत बिल्कुल पसन्द न थी। उसने मौका मिलने पर पिता को सबक सिखाना चाहा।

एक दिन, उस लड़के को गाँव के बाहर एक मरा बैल दिखाई दिया। वह थोड़ी घास लेकर, बैल के मुख के पास रखकर कहने लगा—"खा, खा!" उसके दोस्तों ने ऊबकर उससे पूछा—"अरे, क्या मरा बैल कहीं कुछ खाता है!"

उन लड़कों ने जाकर किसान से कहा—"तुम्हारा लड़का पागल हो गया है। वह मरे बैल को घास खिला रहा है।"

किसान ने आकर लड़के से कहा—"अरे! कहीं मरा बैल घास खाता है! चल, घर चल।" लड़के को डाँटा-डपटा।

"जब मिट्टी में मिला हुआ दादा फूलों की सुगन्ध सूँघ सकता है तो पैर, सिर मुखवाला बैल घास नहीं खा सकता!"—लड़के ने पूछा। किसान को अक्ल आई। उसने तब से पिता की पूजा करनी छोड़ दी।

विचित्र व्याधि

बहुत दिन पहिले किसी गाँव में संगमलाल और दयावती नाम के ग़रीब पति-पत्नी रहा करते थे। उनके बाल बच्चे न थे। दोनों बूढ़े हो रहे थे। संगमलाल शुरू से ही बड़ा गुसैल था। और जैसे जैसे उसकी उम्र बढ़ती गई उसका गुस्सा भी बढ़ता गया। छोटी-छोटी बात पर नाक भौं चढ़ाता। पत्नी को पीट बैठता। यह उसकी रोज़मर्रे की आदत हो गई थी।

दयावती को बच्चे न होने की बड़ी फ़िक्र थी। तिस पर पति का डाँटना-डपटना, गुस्सा करना देखकर वह और भी तंग थी। उसने सोचा—"अगर इस बूढ़े को कभी चोट का स्वाद चखाया गया तो अच्छा होगा" वह ठीक मौके की प्रतीक्षा करने लगी।

फिर एक दिन मौका भी आया, पर समय और भाग्य ने दयावती का साथ न दिया। सवेरे उठते ही, दयावती को दो तीन लातें जमाकर उसका पति जंगल में मज़े से चला गया। रोज़ कन्धे पर कुल्हाड़ी रख, जंगल में लकड़ियाँ काटकर लाना ही उसका काम था।

उस दिन वह पत्नी को मार कर उधर गया ही था कि इधर ज़मीन्दार के नौकर आ धमके। उन्होंने आते ही दयावती के घर के किवाड़ खटखटाकर ज़ोर से पूछा—"कौन है अन्दर!"

उन दिनों ज़मीन्दारों का रौब कुछ ऐसा ही होता था। ख़ैर, दयावती ने किवाड़ खोल दिये। ज़मीन्दार के नौकरों ने उसकी ओर घूरते हुए पूछा—"इस गाँव में कोई देसी दवा-दारू करनेवाला वैद्य है!"

यह प्रश्न सुनते ही दयावती बड़ी खुश हुई। उसने मन में तीन करोड़ देवी-

श्री अमृतलाल नागर

देवताओं को दुहाई दी। फिर कहा—"देसी दवा-दारू करनेवाले हैं क्यों नहीं? एक आदमी है, वह और कोई नहीं, मेरा ही आदमी है। अच्छा तो ख़ैर, बीमार कौन है?" दयावती ने पूछा।

ज़मीन्दार के नौकरों ने सारी बात बता दी। ज़मीन्दार की लड़की बीमार थी। बड़े बड़े वैद्य-हकीमों ने आकर अच्छी अच्छी दवाइयाँ दीं, पर बीमारी काबू में न आई। इसलिए वे देसी वैद्यों की ख़ोज में निकले थे।

"मेरे पति चाहे कितनी भी बड़ी बीमारी हो दवा-दारू करके चुटकी भर में ठीक कर देते हैं। देखिये, कल या परसों मुकन्दलाल का लड़का मन्दिर से गिर पड़ा, उसका पैर टूट गया। इन्होंने जाकर किसी तेल से उसके पैर की मालिश की। आपको खुद वह नज़ारा देखना चाहिये था। मालिश करते ही वह लड़का फिर भागा भागा मन्दिर पर चढ़ गया।" दयावती ने कहा।

उसकी बात सुनकर ज़मीन्दार के नौकर बड़े खुश हुए कि आख़िर उनकी बहुत देर की ख़ोज सफल हो गई थी।

"वह कहाँ है? कहाँ है वह?" वे जल्दी जल्दी पूछने लगे।

"वह लकड़ियाँ काटने जंगल में गया हुआ है।" दयावती ने कहा।

"इतना बड़ा वैद्य है और खुद लकड़ियाँ काटता है! अचरज की बात है।" ज़मीन्दार के नौकरों ने कहा।

"आप अचरज की बात कह रहे हैं! नहीं, यह गजब की बात है।" सिर और हाथ हिलाते हुए दयावती ने कहा—

"वह और वैद्यों की तरह नहीं है। कई बार एकदम किसान की तरह कपड़े

पहिनता है। मौका मिले तो रोगियों के पास से बिना कुछ कहे सुने खिसक भी जाता है। और तो और आजकल तो यह भी इधर उधर कहने लगा है कि उसे वैद्यक ही आती जाती नहीं है। ज़मीन्दार साहब की लड़की की किस्मत है। अगर आपने डंडे को थोड़ा बहुत काम सौंपा, तो वह ज़रूर इलाज करने के लिये मान जाएगा।"

दयावती की बात सुनकर ज़मीन्दार के नौकर हँसे। उनमें से एक ने कहा—

"तुम ठीक ही कह रही हो। हम भी तो दुनियाँ में देख रहे हैं! ये जितने भी अक़्लमन्द हैं, उनमें अक़्ल के साथ कोई न कोई ख़ब्त भी होती है।"

फिर ज़मीन्दार के नौकरों ने जंगल में लकड़ी काटते हुए संगमलाल को देखा।

"तुम ही हो न संगमलाल?" उन्होंने पूछा।

"हाँ हाँ, नहीं नहीं" संगमलाल ने इधर उधर ताकते हुए कहा—"जब तक आप यह न बतायेंगे कि काम क्या है, तब तक आप न जान पायेंगे कि यह कौन है।" संगमलाल ने उनको सन्देह की दृष्टि से देखते हुए कहा। तब ज़मीन्दार के नौकरों ने कहा—

"हम आपकी प्रसिद्धि से परिचित हैं, आपसे थोड़ा काम आ पड़ा है।"

"तब ठीक है! जो कुछ आपने मेरी प्रसिद्ध के बारे में सुना है, वह भी ठीक है। बड़े बड़े पेड़ों को काट गिराने में मैं सचमुच बड़ा माहिर हूँ।"— संगमलाल ने कहा।

"आप इतने बड़े वैद्य हैं, आपके मुख से ये बातें अच्छी नहीं मालूम होतीं।" ज़मीन्दार के नौकरों ने कहा।

संगमलाल ने सोचा कि शायद ये कोई पागल हैं। उसने कहा—"वैद्य क्या! मैंने तो कभी कोई इलाज वग़ैरह नहीं किया है।"

ज़मीन्दार के नौकर एक दूसरे की तरफ़ देखने लगे। उनको याद आया, इसकी पत्नी ने जो कहा था वह सच ही है। फिर क्या था, उनके मोटे मोटे डंडे उसकी पीठ पर धड़ाधड़ पड़ने लगे। संगमलाल रोने-धोने लगा कि वह वैद्य न था। वह शोर करता जाता था। शोर के साथ मार भी अधिक पड़ती जाती थी। बुरी हालत हो गई। आखिर लाचार हो संगमलाल को मानना पड़ा कि वह वैद्य था।

नौकर संगमलाल को सीधे ज़मीन्दार के पास ले गये। ज़मीन्दार ने सामने आकर उसकी अगवानी करते हुए कहा—

"वैद्याचार्य! मैं आप ही की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। आइये। पधारिये।"

संगमसाल को रोगी के कमरे में ले जाया गया। "आपकी तबीयत कैसी है!" संगमलाल ने ज़मीन्दार की लड़की से पूछा। उस लड़की ने धीमे धीमे कुछ गुनगुना दिया।

"मुझे नहीं मालूम कि ये किस भाषा में बात कर रही हैं। मैं एक शब्द भी न समझ पाया हूँ।"—संगमलाल ने आश्चर्य से कहा। तब ज़मीन्दार ने सनम्र कहा—

"एक बार, यकायक लड़की का बोलना बन्द हो गया। तब विवाह का मुहूर्त भी निश्चय कर दिया था। मैं बड़ी आफ़त में फँसा। ख़ैर, आपका क्या ख्याल है कि लड़की की बीमारी क्या है!"

"बीमारी क्या है! बात न कर पाना ही बीमारी है।"—संगमलाल ने कहा।

"कृपया बता सकेंगे कि इस बीमारी का कारण क्या है!" ज़मीन्दार ने पूछा। संगमलाल ने सिर हिलाते हुए कहा—

"कारण क्या है! बस जीभ ने अपना काम करना बन्द कर दिया है। इसके कारणों के बारे में वाल्मीकी ने बहुत कुछ लिखा है। वे बहुत बड़े आदमी हैं। वे एक इंच मुझ से बड़े हैं। क्या आप संस्कृत जानते हैं! ओहो नहीं जानते! इस व्याधि के बारे में संस्कृत के एक श्लोक में निचोड़कर सब कुछ बता दिया गया है। जीभ को हिलानेवाली कुछ नसें हमारे शरीर में होती हैं।" यह सब संगमलाल ने एक ही साँस में कह डाला। उसने

शरीर शास्त्र के बारे में एक छोटा-मोटा व्याख्यान भी दे दिया।

ज़मीन्दार ने सब सुनकर पूछा—"मुझे एक सन्देह है। आपने शरीर शास्त्र के बारे में बहुत कुछ बताया है। वह ठीक ही है। आप यह कहते हैं कि मनुष्य का दिल दाहिनी तरफ़ होता है! यह बाईं तरफ़ है न!"

संगमलाल ने बिना किसी हिचकिचाहट के कहा—"हाँ पहिले ज़माने में ऐसा ही होता था। आजकल सब बदल गया है। उल्टा हो गया है, उल्टा ज़माना, उल्टी बातें।"

"अनजाने ही पूछ बैठा था। माफ़ कीजिये। मैं पुराने ज़माने का आदमी हूँ। आजकल की बातें मालूम नहीं हैं।"—ज़मीन्दार ने कहा।

तब संगमलाल ने ज़मीन्दार की लड़की की नब्ज़ पकड़कर कहा।

"बीमारी अभी शुरू ही हुई है। चावल को लस्सी में खूब मिलाकर खिलाइये। तुरत असर होगा। तोते भी तो यही खाते हैं। देखिये उनका स्वर कितना मधुर होता है!"

संगमलाल पर ज़मीन्दार को विश्वास हो गया। बहुत मना करने पर भी उसने

उसको बहुत रुपया-पैसा दिया और यह भी प्रार्थना की कि समय मिलने पर फिर वह रोगी को देख जाये।

जब संगमलाल घर पहुँचा तो बाहर उसे एक नौजवान खड़ा दिखाई दिया। "कौन हो तुम"? उसने नौजवान से पूछा। नौजवान ने कहा—

"आप बहुत बड़े वैद्य हैं। यह जानकर मैं आपके पास आया हूँ। यह झूठ है कि ज़मीन्दार साहब की लड़की बात नहीं कर सकती। क्योंकि वह पिता द्वारा निश्चित व्यक्ति से विवाह नहीं करना चाहती थी,

इसलिए वह यह बहाना कर रही है। हम दोनों ने पहिले ही निश्चय कर लिया था कि आपस में विवाह कर लेंगे।"

नौजवान की बात सुनकर संगमलाल बड़ा खुश हुआ। चार दिन बाद उस नौजवान को साथ लेकर वह ज़मीन्दार के घर गया। ज़मीन्दार उन दोनों को अपनी लड़की के कमरे में लिवा ले गया।

संगमलाल के साथ आये हुए नौजवान को देखकर ज़मीन्दार की लड़की उठ बैठी। तब उसने कहा कि पिताजी द्वारा निश्चित विवाह वह नहीं करेगी। कुएँ में डूब मरेगी।

लड़की के यह कहते ही ज़मीन्दार को बड़ा गुस्सा आया।

"वैद्य जी! फिर कोई ऐसी दवा दीजिये, जिससे कि लड़की बात न कर सके। मैं यह बकवास सुन नहीं सकता। कान फूटे जा रहे हैं।"—ज़मीन्दार ने गिड़गिड़ाते हुए कहा। यह सुन संगमलाल ने कहा—

"मैं कोई ऐसी दवा नहीं दे सकता, जिससे कि आपकी लड़की फिर बोलना बन्द कर दे। अगर आप चाहें तो मैं ऐसी दवा ज़रूर दे सकता हूँ ताकि आप बहरे हो जायें।"

ज़मीन्दार हक-बका रह गया। करता तो क्या करता? वह अपनी लड़की का विवाह उस व्यक्ति से करने को मान गया, जिसे वह चाहती थी।

संगमलाल घर पहुँचा। पत्नी से उसने अपने इलाज और उसके लिये मिले रुपये-पैसे के बारे में कहा। पहिले तो दयावती को यह सोच अफ़सोस हुआ कि उसकी चाल चल न पाई थी। पर फिर अपने पति की अक़्लमन्दी की तारीफ़ करने लगी। संगमलाल ने भी उस दिन से पत्नी को मारना-पीटना छोड़ दिया।

जैसा जिसने कहा....

काशी नगर में एक व्यापारी के चार लड़के थे। एक दिन जब वे शिकार के लिए जा रहे थे तो रास्ते में, एक शिकारी, एक गाड़ी पर शिकार लाता हुआ दिखाई दिया।

"अबे, थोड़ा मांस दे"—बड़े लड़के ने रौब से पूछा। शिकारी ने जानवर की थोड़ी-सी खाल काटकर उसे दे दी।

दूसरे ने पूछा—"मुझे थोड़ा मांस दो।"

शिकारी ने जाँघ का माँस काटकर दे दिया।

तीसरे ने कहा—"भाई! थोड़ा मांस मुझे भी दो।" तुरत शिकार ने कलेजा काटकर दे दिया।

चौथे ने कहा—"अरे दोस्त! ज़रा हमें भी तो दो।" तुरत शिकारी ने पूछा—"अरे यार! यह तो बताओ, तुम्हारा घर कहाँ है? मैं गाड़ी भर यह माँस तुम्हारे घर पहुँचा दूँगा। यह सब तुम्हारा है।"

"हम चारों में तू ने क्यों इतना भेद किया।"—बड़े लड़के ने पूछा।

"जिसको जितना देना चाहिए था, मैंने उन्हें उतना दे दिया है। भेद मुझ में नहीं है, आपकी बातों में है।"—शिकारी ने कहा।

वे यह सुनकर सन्तुष्ट हुए और उसको उन्होंने अपने यहाँ नौकर रख लिया।

बताओ तुम !

श्री आशाकान्त बी. आचार्य, बिकानेर (राजस्थान)

अन्धेरा गिर गया आकर
बताओ क्या डरोगे तुम ?

अन्धेरे और आँधी से डरे
तब क्या करोगे तुम ?

अगर तुम हारकर हिम्मत
यहाँ आँसू बहाओगे—

कहाओगे अरे बुज़दिल
सफलता यों न पाओगे—

अगर साहस लिये
आगे क़दम अपने बढ़ाओगे—

मिलेगी तब तुम्हें मंज़िल,
सुखी हो मुस्कराओगे !

पिछले महीने के 'बताओगे ?' के प्रश्नों के उत्तर :

१. गणतन्त्र दिवस—२६ जनवरी।
२. अरब में, ब्रिटिश के अधीन है।
३. सम्राट हेल सेलासी।
४. पद्मजा नायुडु।
५. अब कहीं नहीं, पहिले हैदराबाद में चलता था।
६. चौदह।
७. भोपाल।
८. तमिल्नाड़ में।
९. भारत, पाकिस्तान, बर्मा, सिलोन और इन्डोनेशिया।
१०. श्री सुहरावर्दी।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

अप्रैल १९५७ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ५, फ़रवरी '५७ के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

फ़रवरी – प्रतियोगिता – फल

फ़रवरी के फ़ोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो :
'मिलकर चलना सीखो लाल।'

दूसरा फ़ोटो :
'मिलकर खाना बड़ा कमाल।'

प्रेषक : श्री राजेन्द्रकुमार आनन्द, GI/५२४ विनयनगर, नई दिल्ली

प्रो० पी. सी. सरकार

प्रेक्षकों में से एक को रंगमंच पर लाकर बिठा देना चाहिए। इधर उधर की बातें बनाकर, उसकी नज़र उसकी नेकटाई पर जाने देनी चाहिए। तब मौका निकालकर कहना चाहिए—

"आजकल हमारे भारतवर्ष में नेकटाई पहिनने का रिवाज़ नहीं है।" और एक तेज़ कैंची से नेकटाई काट देनी चाहिए।

जैसा कि चित्र में दिखाया गया है, उसके सिर्फ़ टुकड़े टुकड़े ही नहीं कर देने चाहिए, बल्कि मेज़ पर रखी मोम बत्ती से उसे जला भी देना चाहिए।

तब एक सहायक कहता है—"यह भारतीय नहीं है। अंग्रेज़ का लड़का है। और कहता है कि उनमें नेकटाई पहिनने की परम्परा है।" यह सुन जादूगर कुछ हैरान हो जाता है। फिर जादू के डंडे से नेकटाई को यथास्थान पहुँचा देता है। सब को आश्चर्य होता है।

अब मैं इसका रहस्य बताता हूँ। रंगमंच पर निमन्त्रित किया जानेवाला व्यक्ति, जादूगर का आंतरंगिक मित्र होना चाहिए। उसे पहिले ही, एक खास तरह की नेकटाई पहिने हुए होनी चाहिए। एक ही तरह की दो नेकटाई को लाकर रखना चाहिए जैसा "१" में दिखाया गया है। गाँठ के नीचे का भाग उसके कुरते के अन्दर जाने देना चाहिए ताकि वह ऊपर न दीखे।

दूसरी नेकटाई के प्रथम फ्लाप को काटकर नेकटाई की गाँठ के नीचे, जैसे "२" संख्या अंकित चित्र में दिखाया गया है, घुसा देने से पहिले नेकटाई की भ्रान्ति होगी। जादूगर इसी भाग के टुकड़े करके जला देता है। तब जादू के डंडे से कुरते के अन्दर की नेकटाई को बाहर निकाल देना चाहिए। जब ऐसा किया जाता है तो प्रेक्षकों को भ्रम हो जाता है। बस इतना ही है। पर यह ज़रा कठिन जादू है। होशियारी से करना चाहिये। संदेह की गुंजाइश नहीं होनी चाहिए।

अमेरिका के कई जादूगर अब इसे अच्छी तरह दिखा रहे हैं। यह बहुत कठिन नहीं है। अगर इसे हँसते-हँसाते किया गया तो यह बहुत अच्छा जादू है।

भारत में भी आजकल कई जादूगर इस जादू को दिखाने लगे हैं। इसको दिखाने के लिए सतर्कता की बड़ी आवश्कता है।

[यदि पाठक इस जादू के सम्बन्ध में अधिक जानकारी प्राप्त करना चाहें तो वे निम्न पते पर पत्र भेज सकते हैं: **प्रो॰ पी॰ सी॰ सरकार**, मेजीशिएन, पोस्ट बालीगंज, कलकत्ता-१९.]

समाचार वगैरह

बुद्ध जयन्ती समारोह के अवसर पर भारत में तिब्बत के दलाई लामा तथा पँचेन लामा का आगमन हुआ। भारत के मुख्य नगरों का भ्रमण कर वे अपने देश लौट गये।

तिब्बत की उत्तराधिकारी प्रणाली के अनुसार शासन में सत्ता दलाई लामा तथा पँचेन लामा में निहित है। दलाई लामा की सत्ता धर्म-निरपेक्ष प्रशासकीय एवं आध्यात्मिक मामलों से सम्बन्धित है तथा पँचेन लामा की विशुद्ध आध्यात्मिक। ये दोनों लामा भारतीय सरकार द्वारा निमन्त्रित किये गये थे। वे भारत में जब तक रहे सरकार के अतिथि रहे।

* * *

एशियाई लेखकों का प्रथम सम्मेलन ता. २३ दिसम्बर '५६ को आरंभ होकर ता. २८ दिसम्बर '५६ तक जारी रहा। सम्मेलन के पूर्व भारतीय लेखकों का भी एक सम्मेलन सम्पन्न हुआ जिसमें भारतीय भाषाओं के कई सुप्रसिद्ध लेखकों ने भाग लिया। एशियाई लेखक-सम्मेलन में भारत, चीन, सोवियत रूस के मध्य एशियाई गण राज्यों, पाकिस्तान, बर्मा, लंका,
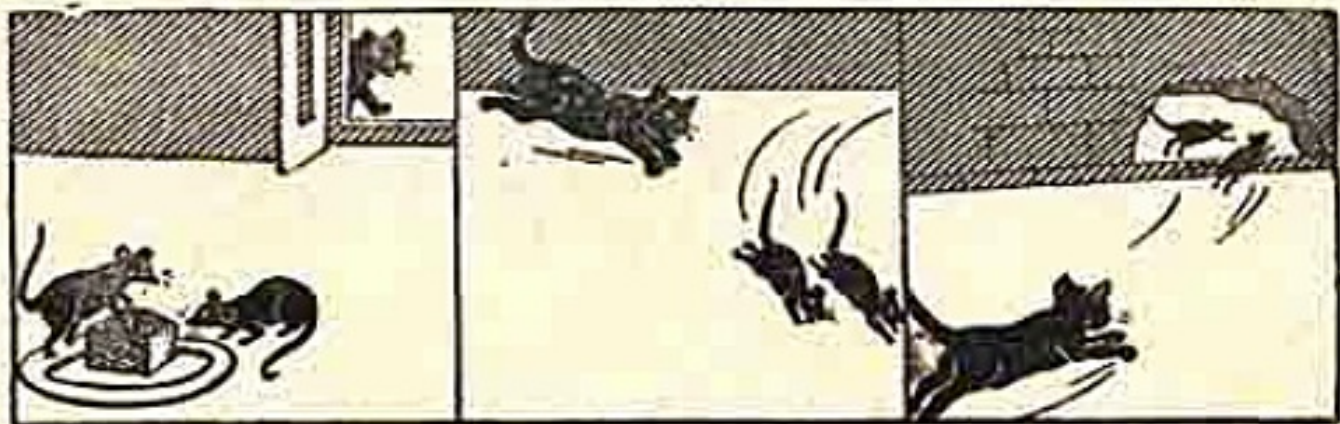
इन्डोनीशिया, मलाया, फिलिपाइन्स, उत्तर वियतनाम, उत्तर कोरिया, ईरान तथा मिस्र के लेखकों ने भाग लिया। सम्मेलन बड़ी सफलता के साथ सम्पन्न हुआ।

* * *

समाचार पत्रों से मालूम होता है कि बिहार में सन् १९५८-'५९ के सत्र से त्रिवर्षीय डिग्री पाठ्य-क्रम आरम्भ होगा।

भारत में डिग्री कालेजों की संख्या ४७० है। इण्टरमीजिएट कालेजों की संख्या १७७ है। अभी तक दिल्ली विश्व-विद्यालय में ही त्रिवर्षीय डिग्री पाठ्य-क्रम चलता था।

* * *

कुछ दिन पूर्व बम्बई में भारत के सर्व प्रथम ग्रामीण विश्व-विद्यालय 'सरदार वल्लभभाई विद्यापीठ' का उद्घाटन किया गया। गत वर्ष अक्तूबर में बम्बई विधान सभा ने कानून बनाकर इस विद्यापीठ को मान्यता प्रदान की। इसके अपने ५ कालेज हैं। इस विश्व-विद्यालय में शिक्षा का माध्यम हिन्दी है।

* * *

विश्व-विद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष श्री चिन्तामणि देशमुख ने आन्ध्र विश्वविद्यालय के दीक्षांत भाषण में कहा—'छात्र सुनियोजित आर्थिक विकास की प्रणाली को समझने की चेष्टा करें और अपनी शिक्षा का पूर्ण सदुपयोग भी करें!' उन्होंने यह मन्तव्य भी व्यक्त किया कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग में विश्वविद्यालय अधिकारियों, शिक्षकों तथा छात्रों को भी भाग लेकर उच्चशिक्षा के पुनर्निर्माण तथा विकास की ओर ध्यान देना चाहिए!

चित्र - कथा

एक दिन शाम को दास और वास पार्क की तरफ़ निकले। रास्ते में एक चोर लड़के ने वास की जेब में से एक दुअन्नी चुरा ली। वास को चोरी का पता न लगा। परन्तु 'टाइगर' उस चोर लड़के के पीछे चलने लगा। वह लड़का एक मिठाई की दुकान पर गया। मिठाई की पोटली खरीद कर वह लड़का पैसा निकाल कर देने को था कि 'टाइगर' पोटली दास और वास के पास उठाकर ले गया। चोर लड़का कुछ दूर तक 'टाइगर' के पीछे चला, पर पोटली दास और वास के पास जाता देख वह भाग गया।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press (Private) Ltd., and Published by him for Chandamama Publications, from Madras 26.—Controlling Editor: SRI 'CHAKRAPANI'

Photo by D. I. Chanthamian
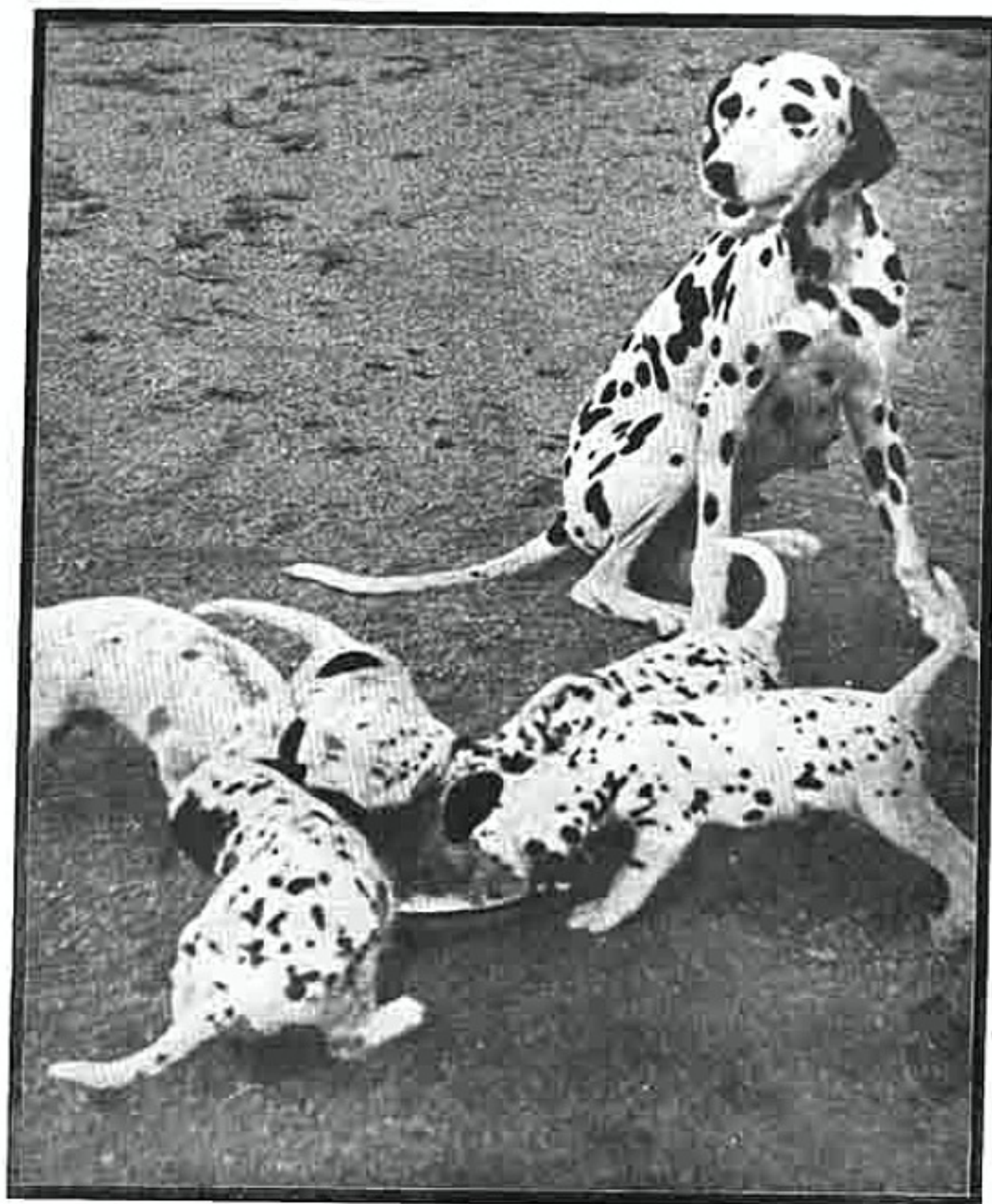
पुरस्कृत परिचयोक्ति

'मिलकर खाना बड़ा कमाल !!'

प्रेषक : श्री राजेन्द्र कुमार आनन्द, नई दिल्ली

भुवन - सुन्दरी